कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 63 अंक : 1 पृष्ठ : 52 नवंबर 2016 मूल्यः ₹22

दलहन और तिलहन में आत्मनिर्भरता

''गरीब की थाली महंगी नहीं होने दूंगा''

''आज मुझे संतोष के साथ कहना है कि इस बार मेरे किसानों ने दाल की बुआई डेढ़ गुना कर दी है, दाल के संकट को मिटाने के लिए, उससे रास्ता खोजने में मेरा किसान आगे आया है। और मैं किसान का अभिनंदन करता हूं। हमने दाल के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य तय किया है। हमने दाल के लिए बोनस निकाला है। हमने दाल की खरीद की व्यवस्था का सुप्रबंधन किया है। और इसलिए अब किसान को दाल के लिए भी हम प्रोत्साहित कर रहे हैं और उसका लाभ भी बहुत बड़ा होगा।''

(15 अगस्त, 2016)

''दो साल के अकाल के कारण दाल के उत्पादन की गिरावट भी चिंता का विषय बनी। लेकिन भाइयो–बहनो, इसके बावजूद भी अगर जिस प्रकार से पहले महंगाई बढ़ती थी अगर उसी रफ्तार से बढ़ी होती, तो पता नहीं मेरे देश के गरीब का क्या होता... इसको रोकने की हमने भरपूर कोशिश की है लेकिन फिर भी, ये सरकार अपेक्षाओं से घिरी सरकार है। आपकी मेरे देशवासियों, अपेक्षाएं स्वाभाविक हैं लेकिन मैं उस दिशा में प्रयत्न करने में कोई कोताही बरतने नहीं दूंगा। जितना प्रयास मुझसे होगा, मैं करता रहूंगा और गरीब की थाली को महंगी नहीं होने दूंगा।''

(15 अगस्त, 2016)

''जब हमारे देश के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री थे, उन्होंने एक बार कहा– जय जवान, जय किसान। देश के किसानों को कहा कि अन्न के भंडार भर दो, फिर इस देश के किसान ने कभी पीछे मुड़ करके देखा नहीं। उसने इतनी मेहनत की, इतनी मेहनत की, अन्न के भंडार भर दिए। अब विदेशों से खाने के लिए अन्न नहीं मंगवाना पड़ता। लेकिन मेरे किसान बहनो, भाइयो हमने अन्न के भंडार तो भर दिए, लेकिन आज देश के लोगों को, खास करके गरीब लोगों को अपने खाने में दलहन की बड़ी आवश्यकता होती है। प्रोटीन उसी से मिलता है, दाल से मिलता है। हमारे यहां दाल का उत्पादन बहुत कम है, विदेशों से लाना पड़ता है। मैं देश के किसानों से आग्रह करता हूं कि अगर आपके पास पांच एकड़ भूमि है तो चार एकड़ भूमि में आप परंपरागत जो काम करते हैं, करिए। कम से कम एक एकड़ भूमि में आप दलहन की खेती कीजिए। देश को जो दालें बाहर से लानी पड़ती हैं, वो लानी न पड़ें और गरीब से गरीब व्यक्ति को जो दाल चाहिए, वो दाल हम उपलब्ध करा सकें। इसीलिए सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य दालों के लिए एक विशेष पैकेज दिया है – जो दाल वगैरह पैदा करेंगे, मूंग, चने वगैरह पैदा करेंगे, उनको अतिरिक्त न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलेगा ताकि देश में दाल के उत्पादन को बढ़ावा मिले और देश की आवश्यकता हमारे देश का किसान पूर्ण करे।''

(28 जून, 2015)

''भाइयो–बहनो, पहले बीमा लेते थे तो बीमा मंजूर होने में चार–चार सीजन चले जाते थे, निर्णय नहीं होता था, बीमा कंपनी, सरकार और किसान के बीच कागज ही चलते रहते थे। हमने निर्णय किया है कि टेक्नोलॉजी का उपयोग किया जाए। तत्काल सर्वे करने में टेक्नोलॉजी का उपयोग किया जाएगा और 25 प्रतिशत राशि उसको तत्काल दी जाएगी और बाद की प्रक्रिया कम से कम समय में पूर्ण करके किसान को दी जाएगी।''

(18 फरवरी, 2016)

''मेरे किसान भाइयो–बहनो अब हमें आधुनिक विज्ञान का उपयोग करते हुए कृषि के क्षेत्र में आगे बढ़ना है। हमें प्रयोग करने की हिम्मत दिखानी हैं। आज सब कुछ विज्ञान में मौजूद है। आज जो सरकार ने पहल की है, वो आपके दरवाजे पर दस्तक दे रही है। मैं खास करके युवा किसानों को निमंत्रण देता हूं–आप आइए, मेरी बात पर गौर कीजिए, भारत सरकार की नई योजनाओं को ले करके आगे बढ़िए। और मैं विश्वास दिलाता हूं भारत का ग्रामीण जीवन, भारत के ग्रामीण गरीब का जीवन, भारत के किसान का जीवन हम बदल सकते हैं और उस काम के लिए मुझे आपका साथ और सहयोग चाहिए।

(19 मार्च, 2016)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 63★ मासिक अंक : 1★ पृष्ठ : 52 ★कार्तिक–अग्रहायण 1938★नवंबर 2016

प्रधान संपादक
दीपिका कच्छल
संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली–110003
दूरभाष : 011–24365925
वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
विनोद कुमार मीना

व्यापार प्रबंधक
दूरभाष : 011–24367453
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण
आशा सक्सेना
सज्जा
बिनोद कुमार

मूल्य एक प्रति	:	22 रुपये
विशेषांक	:	30 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	230 रुपये
द्विवार्षिक	:	430 रुपये
त्रिवार्षिक	:	610 रुपये

इस अंक में

दालों और खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ते कदम — डॉ. जगदीप सक्सेना — 5

दलहन-तिलहन में आत्मनिर्भरता के लिए दूरगामी नीति — सुरेंद्र प्रसाद सिंह — 11

दलहन-तिलहन उत्पादन : चुनौतियां और संभावनाएं — गिरिजेश सिंह महरा, प्रतिभा जोशी, कुशाग्रा जोशी — 15

दलहनी एवं तिलहनी फसलों में आत्मनिर्भरता की दिशा में मिशन 2020 — शिशिर कुमार चौरसिया — 21

दलहन एवं तिलहन उत्पादन बढ़ाने की बेहतर तकनीकें — डॉ. वीरेन्द्र कुमार — 24

कटाई-उपरांत तकनीक से बचेगा करोड़ों का दलहन और तिलहन — चंद्रभान यादव — 30

फसल विविधिकरण और पादप संरक्षण से बढ़ाए दलहन उत्पादन — डॉ. वाई. एस. शिवे — 36

पौष्टिकता और औषधीय गुणों का खजाना दलहन और तिलहन — निमिष कपूर — 42

स्वच्छता पखवाड़ा लेखा-जोखा — --- — 48

स्वच्छता सेनानी
स्वच्छ और आदर्श गांव हिवरे बाजार — शुभम वर्मा — 49

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रभाग, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24367453

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए 'कुरुक्षेत्र' उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

आजादी के बाद भारत ने बहुआयामी सामाजिक और आर्थिक प्रगति की है। आज हमारा देश कृषि के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन चुका है। दालों और तिलहनों का दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक देश होने के साथ–साथ खपत में भी पहले स्थान पर है। परिणामस्वरूप मांग के मुकाबले खपत अधिक होने के कारण दाल–तिहलन का निर्यात करने की जगह हमारी आयात निर्भरता हर साल बढ़ती ही जा रही है। दाल की पैदावार पिछले एक दशक के दौरान औसतन 1.7 करोड़ टन के इर्द–गिर्द ही टिकी हुई है जबकि बढ़ती आबादी, लोगों में बढ़ती स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता और सुधरते जीवन–स्तर के चलते दलहनों की मांग 2.5 करोड़ टन तक पहुंच गई है।

देश में दाल की उपलब्धता पर्याप्त न होने को लेकर प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने भी चिंता जाहिर करते हुए कहा–''कुपोषण हमारी चिंता का विषय है और कुपोषण से मुक्ति का आधार है प्रोटीन। हमारे यहां ज्यादातर गरीब परिवारों को प्रोटीन मिलता है दाल से। लेकिन देश में दालों का उत्पादन बढ़ नहीं रहा है। प्रति हेक्टेयर भी नहीं बढ़ रहा है और उसकी खेती भी कम हो रही है। अगर हमें हमारे देश के गरीब व्यक्ति को प्रोटीन पहुंचाना है तो दाल पहुंचानी पड़ेगी। दाल ज्यादा मात्रा में तब पहुंचेगी जब हमारे यहां दालों की खेती ज्यादा होगी, दालों का उत्पादन ज्यादा होगा।''

बढ़ती जरूरतों के मद्देनजर वर्तमान सरकार ने दालों का उत्पादन बढ़ाने के लिए कई ठोस कदम उठाए हैं। देश में खाद्य सुरक्षा को सतत् बनाए रखने के लिए भारत सरकार द्वारा एक व्यापक राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन चलाया जा रहा है जिसमें दलहनों के अलावा अनाज, मोटे अनाज और कुछ व्यावसायिक फसलें शामिल हैं। पहले यह मिशन केवल सीमित राज्यों में लागू था लेकिन वर्तमान सरकार ने वर्ष 2014–15 से इसे देश के सभी 29 राज्यों के 638 जिलों तक विस्तारित कर दिया है। साथ ही एक बड़ी पहल करते हुए इस मिशन के अंतर्गत कुल आबंटन का लगभग 50 प्रतिशत केवल दलहन विकास के लिए सुरक्षित कर दिया गया है। अब इसका लाभ पूर्वोत्तर के राज्यों तथा पहाड़ी राज्यों जैसे हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर तथा उत्तराखंड के सभी जिलों को भी मिलेगा।

दलहन की खेती का क्षेत्र बढ़ाने के लिए लगभग 200 करोड़ रुपये की विशेष राशि आवंटित की गई है। खेत–स्तर पर दालों के अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों के कार्यक्रमों को भी व्यापक और मजबूत बनाया गया है। इन प्रदर्शनों का उद्देश्य किसानों को दलहनों की वास्तविक उपज क्षमता से परिचित कराना है जिससे वे दलहन की खेती की ओर आकर्षित हो और इसे अपनाएं। आंकड़े बताते हैं कि ये दलहन प्रदर्शन अपने उद्देश्य में कामयाब हुए हैं क्योंकि प्रदर्शन वाले क्षेत्र में दलहनों का क्षेत्र लगातार बढ़ रहा है। साथ ही, सरकार ने इसी वर्ष से दलहन फसलों के गुणवत्तापूर्ण बीजों की समय पर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए देशभर में सीड हब स्थापित करने की योजना लागू की है। वर्ष 2016–17 में 51,285 क्विंटल बीज उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। इससे दलहनों की उत्पादकता में सार्थक वृद्धि की संभावना है। एक तरफ किसानों का दालों की खेती के प्रति रुझान बढ़ाने के लिए सरकार ने दलहनों का समर्थन मूल्य बढ़ाया है और खरीद नीति को अधिक पारदर्शी और लाभप्रद बनाया है तो दूसरी तरफ, उपभोक्ताओं के हित को देखते हुए 500 करोड़ रुपये की निधि से मूल्य स्थिरीकरण कोष का गठन किया है। साथ ही, दालों का 1.5 लाख टन का बफर स्टॉक बनाने का फैसला किया है जिसके अंतर्गत दालों की खरीद और भंडारण की प्रक्रिया शुरू हो गई है। दालों की कमी को पूरा करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय संयुक्त रूप से कार्य करेंगे। दालों का रकबा बढ़ाकर इनकी उत्पादकता और उत्पादन में वृद्धि की द्विआयामी अवधारणा पर ये मिलकर कार्य करेंगे।

अब बात करते हैं तिलहन की। यूं तो भारत को दुनिया में सबसे ज्यादा तिलहनी फसलें उगाने का गौरव प्राप्त है परंतु विडंबना यह है कि खाद्य तेलों की घरेलू मांग को पूरा करने के लिए हमें अपनी जरूरत का लगभग 50 प्रतिशत तेल अन्य देशों से आयात करना पड़ता है। देश में कुल तिलहन उत्पादन में सोयाबीन का सर्वाधिक 36 प्रतिशत योगदान है। इसके बाद मूंगफली, तोरिया, सरसो, अरंडी, तिल, सूरजमुखी, अलसी, कुसुम और रामतिल का स्थान है। भारत अरंडी का सबसे बड़ा उत्पादक देश है और अरंडी तेल के वैश्विक बाजार में इसका प्रमुख स्थान है।

देश में खाद्य तेल खपत की वृद्धिदर बढ़कर 4.3 प्रतिशत हो गई है जबकि तिलहनों के वार्षिक उत्पादन में लगभग 2.2 प्रतिशत की ही बढ़ोतरी हुई है। अतः खाद्य तेलों का आयात करना जरूरी हो गया है। घरेलू मांग को पूरा करने के लिए पिछले वर्ष 69,717 करोड़ रुपये मूल्य के खाद्य तेलों का आयात करता पड़ा। वर्ष 2020 तक प्रति व्यक्ति खाद्य तेल की खपत 16.43 कि.ग्रा. और वर्ष 2025 तक बढ़कर 16.98 कि. ग्रा. रहने का अनुमान है जिसे पूरा करने के लिए क्रमशः 868.4 लाख टन और 933.2 लाख टन तिलहन की जरूरत पड़ेगी।

बढ़ती मांग के मद्देनजर सरकार ने पिछले दो वर्षों में तिलहनी फसलों का उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए अनेक ठोस कदम उठाए हैं जिससे उत्साहजनक परिणाम सामने आए हैं। तिलहनी फसलों और ऑयल पाम की उपज बढ़ाने के उद्देश्य से एक राष्ट्रीय मिशन लागू किया गया है जिसके लिए 12वीं योजना के दौरान 3 हजार 507 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। मिशन का पहला उद्देश्य तिलहनी फसलों की नई किस्मों को किसानों के बीच प्रचलित करना है जिससे बीज प्रतिस्थापन दर में सुधार हो और उपज बढ़े। साथ ही, तिलहनी फसलों में सिंचित क्षेत्र को 26 प्रतिशत से बढ़ाकर 36 प्रतिशत तक पहुंचाना है। अनाज एवं दलहन फसलों के साथ तिलहन फसलों की मिश्रित खेती को भी प्रोत्साहित किया जा रहा है। पॉम ऑयल के पेड़ लगाने की योजना को भी तेजी से पूरा किया जाना है। राष्ट्रीय मिशन में तीन मिनी मिशन शामिल किए गए हैं। तिलहन मिशन का लक्ष्य तिलहन की पैदावार को 2.90 करोड़ टन से बढ़ाकर 3.55 करोड़ टन करने का है।

उम्मीद है कि सरकार के सही दिशा में व्यापक सुधारों और प्रयासों के चलते देश का किसान दलहन–तिलहन उत्पादन की ओर आकर्षित होगा और अपनी मेहनत और कृषि वैज्ञानिकों के मार्गदर्शन से निकट भविष्य में देश इनके उत्पादन में आत्मनिर्भर होगा।

दालों और खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ते कदम

—डॉ. जगदीप सक्सेना

अगर हमें हमारे देश के गरीब से गरीब व्यक्ति को प्रोटीन पहुंचाना है तो दाल पहुंचानी पड़ेगी। दाल ज्यादा मात्रा में तब पहुंचेगी, जब हमारे यहां दालों की खेती ज्यादा होगी, दालों का उत्पादन ज्यादा होगा। दलहनी फसलों के गुणवत्तापूर्ण बीजों की समय पर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए वर्तमान सरकार ने इसी वर्ष देश भर में दलहन बीज केन्द्र (सीड हब) स्थापित करने की योजना लागू की है। इसके अंतर्गत 100 सीड हब राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केन्द्रों और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शोध संस्थानों में स्थापित करने की प्रक्रिया शुरू हो गई है। अगले वर्ष इनकी संख्या बढ़ाकर 150 की जाएगी।

सन् 60 के दशक में हुई हरितक्रांति ने देश को खाद्यान्नों के मामले में आत्मनिर्भर बना दिया। विदेशों से अनाज याचना की दुःखदायी परंपरा हमेशा के लिए खत्म हो गई। देश की लगातार बढ़ती आबादी को पर्याप्त अनाज उपलब्ध कराने के बाद भी आज हमारे अन्न भंडारों में आवश्यकता से अधिक अनाज जमा है। इससे प्रतिकूल दशाओं में भी भारत की खाद्य सुरक्षा सतत् और सुनिश्चित हुई है। परंतु भारतीय कृषि की असाधारण सफलता की इस कहानी में कुछ चुनौतियां आज भी बनी हुई हैं। दालों और खाद्य तेलों की घरेलू मांग के लिए हमें विदेशों से आयात पर निर्भर रहना पड़ता है। मांग और आपूर्ति के बीच बढ़ते फासले के कारण अक्सर, खासतौर से दालों में, कीमतों में भारी उछाल का सामना करना पड़ता है। दालों और खाद्य तेलों का कुल उत्पादन और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता बढ़ाकर इस चुनौती से काफी हद तक निपटा जा सकता है।

वर्तमान सरकार के दो वर्ष से अधिक के कार्यकाल के दौरान इस ओर अनेक ठोस कदम उठाए गए, जिसके सकारात्मक नतीजे सामने आ रहे हैं। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने इन चुनौतियों का जिक्र करते हुए अपने भाषण में कहा, ''कुपोषण हमारी चिंता का विषय है और कुपोषण से मुक्ति का आधार है प्रोटीन। हमारे यहां ज्यादातर गरीब परिवारों को प्रोटीन मिलता है दाल से। लेकिन देश में दालों का उत्पादन बढ़ नहीं रहा है। प्रति हेक्टेयर भी नहीं बढ़ रहा है और उसकी खेती भी कम हो रही है। अगर हमें हमारे देश के गरीब से गरीब व्यक्ति को प्रोटीन पहुंचाना है तो दाल पहुंचानी पड़ेगी। दाल ज्यादा मात्रा में तब पहुंचेगी, जब हमारे यहां दालों की खेती ज्यादा होगी, दालों का उत्पादन ज्यादा होगा। देश को आज दालें आयात करनी पड़ती हैं। हम ठान लें कि दस साल के भीतर–भीतर ऐसी मेहनत करें कि जब 2022 में हिन्दुस्तान आजादी के 75 साल मनाएगा, तो उस समय हमें दालों का आयात

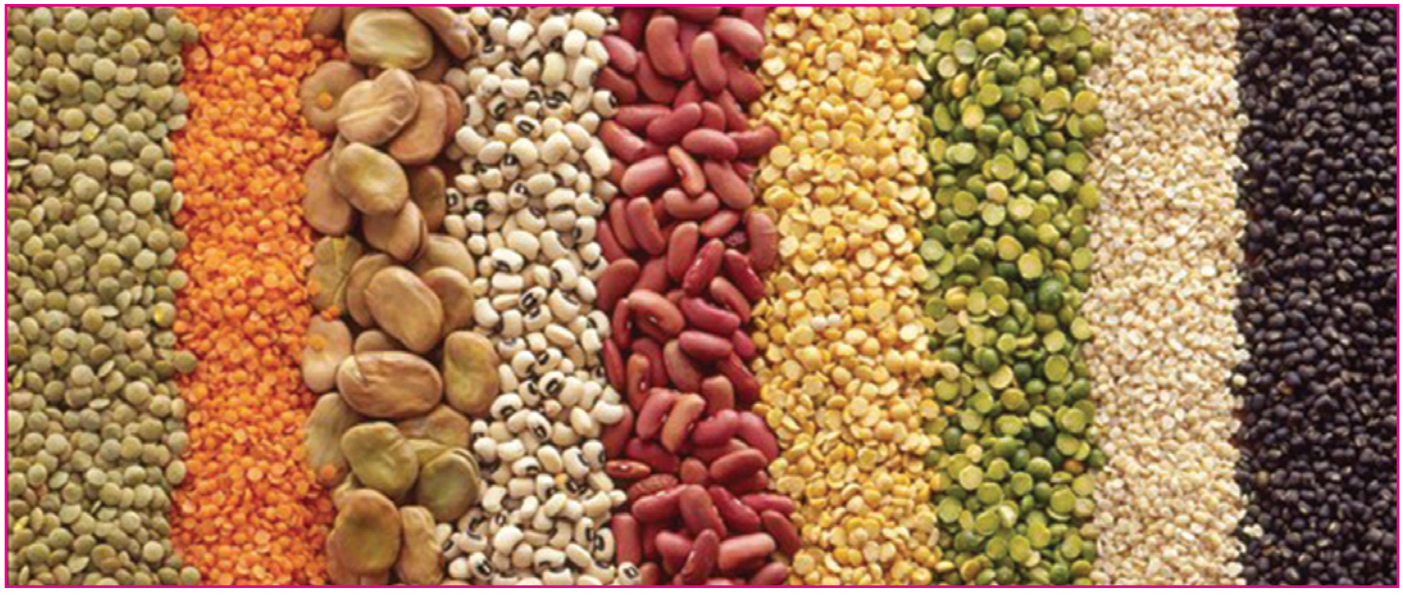

ना करना पड़े। हम किसान मिलकर यह काम कर सकते हैं, हम एक मिशन मोड में यह काम कर सकते हैं। आज हमारे देश में खाद्य तेल आयात करना पड़ रहा है। एक तरफ हमारा किसान जो पैदावार करता है, उसके दाम नहीं मिलते और दूसरी तरफ देश की जरूरत है, वो पैदा नहीं होता। हमें विदेश से तेल लाने के लिए तो पैसा देना पड़ता है, लेकिन किसान को देने को हमारे पास कुछ बचता नहीं है। क्या हम खाद्य तेल का आयात बंद करने के लिए उत्पादन नहीं कर सकते, हम लक्ष्य नहीं बना सकते।'' (26 मई, 2015 को किसान चैनल के उद्घाटन के अवसर पर दिए गए भाषण के अंश)।

प्रधानमंत्री के आह्वान पर तुरंत और प्राथमिकता से कार्य करते हुए दलहन और तिलहन का उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाने की एक समग्र रणनीति तैयार की गई, जिस पर गंभीरता से अमल किया जा रहा है। भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र के अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष 2016 को समर्थन देते हुए इस वर्ष राष्ट्रीय–स्तर पर दलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए अनेक कार्यक्रम आयोजित किए और ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभावशाली गतिविधियां आयोजित की जा रही हैं। 'पोषण सुरक्षा एवं टिकाऊ कृषि के लिए दलहन' विषय पर इस महीने (12–14 नवंबर, 2016) भारत में एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें अनुसंधानकर्ता, नीति निर्माता, प्रसारकर्मी, व्यापारी और अन्य सभी संबंधित शामिल होंगे। इसका उद्देश्य आपसी विचार–विमर्श द्वारा दलहनों की उत्पादकता तथा लाभदायता बढ़ाने के लिए सर्वसम्मति से एक भावी योजना तैयार करना है। साथ ही देश के ग्रामीण इलाकों में दलहन गोष्ठियां आयोजित करने का सिलसिला जारी है, जिसमें किसान भाइयों को दलहन उत्पादन की नई संभावनाओं और बेहतर उत्पादन तकनीकों से परिचित कराया जाता है।

दाल का हाल

हमारा देश दुनिया में सबसे ज्यादा दलहन उत्पादन करता है (कुल 800 लाख टन उत्पादन का लगभग 25 फीसदी) और दालों का सबसे ज्यादा उपभोग (लगभग 28 फीसदी) भी करता है। हाल में दालों का आयात निरंतर बढ़ने के कारण अब इसे सबसे ज्यादा दाल आयात करने वाले देश का दर्जा भी प्राप्त हो गया है। भा.कृ.अ.नु.प. भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर के 'विज़न–2050' के अनुसार देश में दालों का वर्तमान उत्पादन 190 लाख टन के आसपास है, जो लगभग 210 लाख टन की मौजूदा मांग से सीधे 20 लाख टन कम है। इसलिए हमें हर साल लगभग 20 से 30 लाख टन दाल आयात करनी पड़ती है, जिस पर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा खर्च होती है। देश में दलहन उत्पादन का कुल क्षेत्र 240 से 250 लाख हेक्टेयर आंका गया है। दालों की औसत प्रति हेक्टेयर उत्पादकता लगभग 780 किलोग्राम है, जो विश्व के औसत से कम है और चिंता का कारण भी है। इस समय दालों की प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपलब्धता लगभग 37 ग्राम है, जो पोषण वैज्ञानिकों द्वारा सिफारिश की गई मात्रा 52 ग्राम से काफी कम है। यदि हम वर्ष 2050 में एक स्वस्थ भारत की कल्पना कर रहे हैं तो उस समय की संभावित आबादी के भरण–पोषण के लिए 390 लाख टन दालों की आवश्यकता होगी। इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए आवश्यक है कि दलहन विकास की वार्षिक दर कम से कम 2.14 प्रतिशत हो। इसके लिए उत्पादकता 1200 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक बढ़ानी होगी और दलहन उत्पादन के क्षेत्र में 30 से 50 हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र भी जोड़ना होगा। परंतु इस लक्ष्य तक पहुंचना आसान नहीं है, क्योंकि दलहन उत्पादन के क्षेत्र में अनेक बाधाएं और चुनौतियां हैं।

दलहन उत्पादन का लगभग 92 फीसदी क्षेत्र असिंचित यानी बारानी इलाकों में है। इसलिए फसल उत्पादन मुख्य रूप से मानसूनी वर्षा पर निर्भर रहता है। सही समय पर सिंचाई ना मिलने से या सूखा पड़ जाने से उत्पादकता पर गहरी चोट पड़ती है। बारानी इलाकों में सूखे जैसी दशाओं और तापमान में वृद्धि के कारण सूखे और अधसूखे क्षेत्रों में दालों की पैदावार 50 प्रतिशत तक गिर सकती है। वैश्विक तापमान में वृद्धि होने से दालों के उत्पादन पर गंभीर चोट पहुंचने की आशंका जतायी जा रही है। दालों से आकर्षक लाभ ना मिलने के कारण किसान भाई अक्सर दालों को कम उपजाऊ और समस्याग्रस्त भूमि (लवणीय या क्षारीय) पर उगाते हैं, जिससे स्वाभाविक रूप से कम पैदावार मिलती है। इस प्रकार की मिट्टी में आमतौर पर जल का निकास भी अच्छा नहीं होता, जिससे बरसात के मौसम में खेत में जलभराव हो जाता है। इससे खेत में पौधों की संख्या कम रह जाती है और रोगों तथा कीड़ों का प्रकोप भी बढ़ जाता है। फलियों में नाइट्रोजन और फास्फोरस की अधिकता के कारण भी दलहनी फसलों पर कीड़ों और रोगों का प्रकोप अपेक्षाकृत ज्यादा होता है। इन कारणों से फसल को 70 से 90 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है। उत्पादन और कीमतों में अस्थिरता के कारण किसान भाई दलहनी फसलों में आवश्यक कृषि आदानों यानी इनपुट्स का इस्तेमाल कम करते हैं (ज्यादातर किसान अनाज वाली फसलों या नकदी फसलों को प्राथमिकता देते हैं), जिससे अपेक्षित उत्पादकता नहीं मिल पाती। दलहनी फसलों की उन्नत और उपयुक्त किस्मों के गुणवत्तापूर्ण बीजों की अक्सर कमी बनी रहती है, जिससे किसान इन किस्मों का लाभ उठाने से वंचित रह जाते हैं। दलहनी फसलों के प्रति आमतौर पर उदासीनता के कारण किसानों ने इनकी खेती में नई प्रौद्योगिकी का समावेश नहीं किया, जिससे प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो पाई। यही कारण है कि दलहनों में बीज प्रतिस्थापन दर भी काफी कम है। किसानों को दलहनी फसलों की वैज्ञानिक खेती के लिए प्रेरित करना केवल आवश्यक नहीं, बल्कि अनिवार्य हो गया है, इसलिए सरकार द्वारा किसानों को साथ लेकर आगे बढ़ने की ठोस रणनीति बनायी गई है।

सरकार का प्रयास–हर थाली में दाल

वर्तमान सरकार ने दालों का उत्पादन बढ़ाने के लिए अनेक ठोस कदम उठाए हैं, जिनका संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत है:

- देश में खाद्य सुरक्षा को सतत् बनाए रखने के लिए भारत सरकार द्वारा एक व्यापक राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन चलाया जा रहा है, जिसमें दलहनों के अलावा अनाज, मोटे अनाज और कुछ व्यावसायिक फसलें शामिल हैं। पहले यह मिशन केवल सीमित राज्यों में लागू था, परंतु वर्तमान सरकार ने इसे वर्ष 2014–15 से देश के सभी 29 राज्यों के 638 जिलों तक विस्तारित कर दिया है। साथ ही एक बड़ी पहल करते हुए इस मिशन के अंतर्गत कुल आबंटन का लगभग 50 प्रतिशत केवल दलहन विकास के लिए सुरक्षित कर दिया गया। अब इसका लाभ पूर्वोत्तर के राज्यों तथा पहाड़ी राज्यों जैसे हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर तथा उत्तराखंड के सभी जिलों को भी मिलेगा। गौरतलब है कि इन राज्यों में भी दालों की खेती की अच्छी संभावना आंकी गई है, परंतु संसाधनों की कमी के कारण अभी तक यहां दालों की खेती अधिक प्रचलित नहीं हो पायी थी। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अंतर्गत मिलने वाली सहायता से आशा है कि पूरे देश में दलहनी फसलों की खेती जोर पकड़ेगी।
- दलहनों की खेती का क्षेत्र बढ़ाने के लिए लगभग 200 करोड़ रुपये की विशेष राशि आबंटित की गई है। इसके अंतर्गत अनाज, तिलहन, व्यावसायिक फसलों के साथ अंतरफसल के रूप में दलहन की खेती, धान के खेतों की मुंडेर पर दालों की खेती, पूर्वी भारत में हरित क्रांति की पहल के तहत धान की फसल की कटाई के बाद खाली क्षेत्र में दालों की खेती और रबी तथा जायद में दालों की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। इसके तहत ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। ये प्रयास वैज्ञानिक खोजों द्वारा प्रस्तावित और समर्थित हैं। अनेक राज्यों में किए गए खेत प्रयोगों में देखा गया है कि धान की कटाई के बाद चना और मसूर की कम अवधि वाली किस्मों को उगाकर एक से ढाई टन प्रति हेक्टेयर की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। धान–गेहूं के फसल चक्र में यदि धान की जगह अरहर को जगह दी जाए तो बेहतर आमदनी हासिल होती है। भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान ने चावल – गेहूं – मूंग, अरहर – गेहूं, मक्का/ज्वार/बाजरा–चना/मसूर जैसी लाभदायक फसल प्रणालियों को अपनाने की सिफारिश की है। गन्ना की फसल के साथ मूंग और उड़द की फसलें सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। दालों को कई अन्य फसलों के साथ अंतःफसल के रूप में भी उगाया जा सकता है, जैसे चना के साथ सरसो, मूंग के साथ सूरजमूखी, आलू के साथ राजमा आदि। समुद्र तल से 2000 मीटर से अधिक ऊंचाई पर अरहर की अति–लघु अवधि की किस्में उगाकर भी दालों का कुल क्षेत्रफल बढ़ाया जा सकता है।
- वर्तमान सरकार ने एक बड़ा कदम उठाते हुए खेत–स्तर पर दालों के अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों के कार्यक्रम को व्यापक और मजबूत बनाया। वर्ष 2015–16 के दौरान देश के विभिन्न भागों में स्थित 475 कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से 60,000 से भी अधिक प्रदर्शन आयोजित किए गए। इस तरह कुल 22,000 हेक्टेयर क्षेत्र पर प्रदर्शनों का आयोजन किया गया। वर्ष 2016–17 के दौरान कुल 31,000 हेक्टेयर क्षेत्र पर 77,500 प्रदर्शन आयोजित करने का लक्ष्य तय किया गया है। इन प्रदर्शनों के अंतर्गत वैज्ञानिकों द्वारा किसानों के खेतों पर दालों की उन्नत किस्मों, नई उत्पादन तकनीकों, फसल प्रबंध के नए उपायों, खाद व उर्वरकों के उचित उपयोग, रोगों व कीड़ों के प्रबंध की नई तकनीकों आदि का प्रदर्शन किया जाता है और सभी आवश्यक कृषि आदान भी उपलब्ध कराए जाते हैं। उद्देश्य यह है कि किसानों को दलहनों की वास्तविक उपज क्षमता का ज्ञान हो सके, जिससे वे दलहनों की खेती की ओर आकर्षित हो और इसे अपनाएं। आंकड़े बताते हैं कि ये दलहन प्रदर्शन अपने उद्देश्य में कामयाब हुए हैं, क्योंकि प्रदर्शन वाले क्षेत्रों में दलहनों का क्षेत्र लगातार बढ़ रहा है।
- दलहनी फसलों के गुणवत्तापूर्ण बीजों की समय पर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए वर्तमान सरकार ने इसी वर्ष देश भर में दलहन बीज केन्द्र (सीड हब) स्थापित करने की योजना लागू की है। इसके अंतर्गत 100 सीड हब राज्य कृषि

विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केन्द्रों और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शोध संस्थानों में स्थापित करने की प्रक्रिया शुरू हो गई है। अगले वर्ष इनकी संख्या बढ़ाकर 150 की जाएगी। भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान इस परियोजना के लिए नोडल संस्थान के रूप में कार्य कर रहा है। इस परियोजना को 2016 से 2018 के दो वर्षों के लिए आवश्यक धनराशि के आबंटन के साथ लागू किया गया है। इसके अंतर्गत प्रत्येक सीड हब में बीज उत्पादन के लिए जरूरी बुनियादी ढांचा विकसित करने के साथ बीजों के प्रसंस्करण और भंडारण की सुविधाएं भी विकसित की जा रही हैं। सीड हब के जरिए वर्ष 2016–17 में 51,285 क्विंटल, 2017–18 में 71,520 क्विंटल और वर्ष 2018–19 में 92,650 क्विंटल बीज उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। इस तरह आने वाले तीन वर्षों में कुल 21,54,55 क्विंटल दलहन बीज तैयार करके किसानों को बांटे जा सकेंगे। इससे दलहनों की उत्पादकता में सार्थक वृद्धि की संभावना जतायी जा रही है।

दालों की कीमतें–सबके हित पर नजर

वर्तमान सरकार किसानों और उपभोक्ताओं, दोनों के हितों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध है। इसलिए सरकार द्वारा दलहनों का न्यूनतम समर्थन मूल्य (एसएसपी) बढ़ाया गया है और घरेलू मांग को पूरा करने के लिए आयात में वृद्धि की गई है। साथ ही दालों का एक समृद्ध बफ़र स्टॉक भी तैयार किया जा रहा है। वर्ष 2016–17 के लिए अरहर का न्यूनतम समर्थन मूल्य 5050 रुपये प्रति क्विंटल तय किया गया है, जिसमें 425 रुपये का बोनस शामिल है। इसी तरह मूंग का 5225 रुपये और उड़द का 5000 रुपये प्रति क्विंटल मूल्य तय किया गया है, जिसमें 425 रुपये का बोनस शामिल है। ये सभी मूल्य खरीफ फसल के लिए हैं। दालों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों की वार्षिक चक्रवृद्धि विकास दर वर्ष 2007–08 से 2015–16 के बीच अरहर में 14.6 प्रतिशत, मूंग व उड़द में 13 प्रतिशत एवं चने में 11 प्रतिशत दर्ज की गई है, जिससे किसानों का दालों की खेती के प्रति रुझान बढ़ा है। वर्तमान सरकार ने दालों की खरीद नीति को अधिक पारदर्शी एवं लाभप्रद बनाया है।

उपभोक्ताओं के हित को देखते हुए वर्तमान सरकार ने 500 करोड़ रुपये की निधि से मूल्य स्थिरीकरण कोष का गठन किया है। इसका उद्देश्य दाल, प्याज और आलू जैसी घरेलू उपयोग की जिंसों की बाजार कीमतों को नियंत्रण में रखना है, क्योंकि अक्सर बाजार मांग के कारण इनकी कीमतों में भारी उछाल आ जाता है। ऐसी दशा में सरकार स्वयं बाजार में हस्तक्षेप करते हुए कीमतों पर नियंत्रण रखने का प्रयास करेगी, जिसका सीधा लाभ उपभोक्ताओं को होगा। हाल में सरकार ने एक कानून बनाकर जरूरी वस्तुओं की कीमतें तय करने का अधिकार भी प्राप्त कर लिया है, जबकि पहले केवल बाजार दशाएं ही कीमतें तय करती थीं।

दरअसल हाल की कीमतों में आमतौर पर उतार–चढ़ाव घरेलू मांग और बाजार आपूर्ति के बीच बढ़ते फासले के कारण होता है। इसलिए वर्तमान सरकार ने दालों का 1.5 लाख टन का बफ़र स्टॉक बनाने का फैसला लिया है, जिसके अंतर्गत दालों की खरीद और भंडारण की प्रक्रिया शुरू हो गई है। बफ़र स्टॉक में 45,000 टन अरहर, 5,000 टन उड़द, 80,000 टन चना और 24,000 टन मसूर रखने की व्यवस्था की गई है। यदि बाजार में दालों की कमी से कीमतें बढ़ती हैं तो सरकार बफ़र स्टॉक से बाजार आपूर्ति का संतुलन बनाने का काम करेगी।

तेल की धार

भारतीय समाज, खानपान और अर्थव्यवस्था में वनस्पति खाद्य तेलों का अपना एक विशेष महत्व है। वनस्पति तेलों की आर्थिकी के मामले में भारत का स्थान अमेरिका, चीन, ब्राजील और अर्जेंटीना के बाद पांचवें स्थान पर है। विभिन्न कृषि जलवायु और भौगोलिक दशाओं के कारण भारत में कुल नौ तरह की वार्षिक तिलहनी फसलें उगाई जाती हैं–मूंगफली, तोरिया–सरसो, सोयाबीन, सूरजमुखी, तिल, कुसुम, रामतिल, अरंडी और अलसी। इसमें अरंडी और अलसी के तेल का इस्तेमाल औद्योगिक तथा अन्य उपयोगों के लिए किया जाता है। फसलों के महत्व के नजरिए से देखें तो हमारे देश में अनाज के बाद तिलहनों का स्थान है, जो देश के कुल फसल क्षेत्र के 14 प्रतिशत भाग में उगाए जाते हैं और देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में इनका योगदान लगभग तीन प्रतिशत है। इस समय तिलहनों का कुल क्षेत्रफल 270 लाख हेक्टेयर से कुछ अधिक आंका गया है, जिससे लगभग 327 लाख टन (2013–14) उत्पादन प्राप्त होता है और उत्पादकता 1,100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से कुछ अधिक है। साथ ही भारत को दुनिया में सबसे ज्यादा तिलहनी फसलें उगाने का गौरव भी प्राप्त है, परंतु विडंबना यह भी है कि खाद्य तेलों की घरेलू मांग को पूरा करने के लिए जरूरत का लगभग 50 प्रतिशत तेल अन्य देशों से आयात करना पड़ता है। खान–पान की आदतों में बदलाव तथा प्रति व्यक्ति आय में लगातार बढ़ोतरी के कारण अनुमान है कि वर्ष 2050 में लगभग 1000 लाख टन तिलहनों का उत्पादन करना होगा, यानी अगले 35 वर्षों में तिलहनों के उत्पादन में तीन गुना वृद्धि करनी होगी।

वर्ष 2050 के इस लक्ष्य को पाने के रास्ते में अनेक चुनौतियां और बाधाएं हैं, जिनसे तिलहन उत्पादन में अपेक्षित उछाल पाना कठिन होता जा रहा है। तिलहनी फसलों की लगभग 82 प्रतिशत खेती बारानी दशाओं में और कमजोर भूमि में की जाती है, जिससे उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बारानी क्षेत्र में मौसम का प्रभाव तथा उतार–चढ़ाव भी तिलहनी फसलों की उपज पर बुरा असर डालता है। यह भी देखा गया है कि तिलहनी फसलों की

अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष–2016

दलहन का वैश्विक उत्पादन, उपभोग एवं व्यापार

दलहन उत्पादन का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। आज भी इनका महत्व न सिर्फ महत्वपूर्ण फसलों के तौर पर है, बल्कि इनकी उपयोगिता खाद्य सुरक्षा, पोषण सुरक्षा, गरीबी उन्मूलन, स्वास्थ्य सुधार एवं कृषि को टिकाऊ बनाने की दृष्टि से भी कम नहीं है। इसके बावजूद गत 50 वर्षों में मक्का, गेहूं, धान अथवा सोयाबीन की तुलना में दलहनी फसलों के उत्पादन में कोई खास बढ़ोतरी नहीं हुई है। हरितक्रांति के कारण 1961 से 2012 के दौरान कई बुनियादी खाद्यान्नों की उपज और उत्पादकता में कृषि औद्योगिकीकरण एवं मशीनीकरण के कारण अत्यधिक वृद्धि देखने को मिली है। इस अवधि में मक्का, गेहूं, धान और सोयाबीन के उत्पादन में 200 से 800 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी हुई, जबकि इस अवधि में दलहनी फसलों में 59 प्रतिशत की वृद्धि देखने को मिली।

विकसित और विकासशील देशों में दलहनी फसलों की खपत में निरंतर गिरावट की प्रवृत्ति देखने को मिली है। इसके विपरीत डेयरी एवं मांस उत्पादों की मांग में तेजी आई है। इसमें आने वाले समय में भी बढ़ोतरी की संभावनाएं हैं। वैश्विक आधार पर दलहन की प्रति व्यक्ति औसत खपत लगभग 7 कि.ग्रा./ व्यक्ति/वर्ष के स्तर पर ही बनी हुई है। सवाल यही है कि आखिरकार दलहनी फसलों का प्रदर्शन अन्य फसलों की तुलना में इतना खराब क्यों है? इसका उत्तर कुछ हद तक आहार में बदलाव और उपभोक्ताओं के स्वाद के बदलते रुझान के आधार पर दिया जा सकता है। कोई भी देश जब समृद्धि की ओर अग्रसर होता है तो वहां के लोग शाकीय प्रोटीन के बदले अन्य महंगे प्रोटीन स्रोतों, जैसे डेयरी एवं मांस आदि के प्रति अधिक आकर्षित होने लगते हैं। इसका मतलब यह कतई नहीं लगाया जाना चाहिए कि ऐसी स्थिति में दलहन फसलों में आधिक्य की स्थिति होगी या मांग में जबर्दस्त कमी होगी। कई देशों में जनसंख्या वृद्धि दर कृषि उत्पादन दर से कहीं अधिक है। ऐसे मामलों में उन देशों को मजबूरीवश दलहन का आयात करना पड़ता है। इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि जनसंख्या वृद्धि की तुलना में दलहन का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तेजी से क्यों बढ़ रहा है। और यह भविष्य में बने रहने की संभावना है, क्योंकि दलहन उत्पादन, व्यापार की तुलना में कहीं कम है। भारत और चीन में इस असंतुलन का प्रभाव भी दिखने लगा है। एक ओर चीन, दलहन के निर्यातक राष्ट्र से आयातक के रूप में परिवर्तित हो गया है तो वहीं दूसरी ओर विश्व में दलहन का शीर्ष उत्पादक एवं आयातक देश भारत इस वर्ष खराब फसल के कारण दलहन के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि की स्थिति की चुनौती का सामना करने को विवश है। इसलिए अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष की सार्थरता वर्तमान संदर्भ में और भी बढ़ जाती है। महत्वपूर्ण दलहनी फसलों के बारे में जागरूकता बढ़ोतरी से इनके उत्पादन को बढ़ाने के साथ नए अनुसंधान एवं विकास के कार्यकलापों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। परिणामस्वरूप वैश्विक– स्तर पर दलहन की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है।

दालों के महत्व को रेखांकित करते हुए 2016 को अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष घोषित किए जाने का निर्णय 20 दिसंबर 2013 को संयुक्त राष्ट्र महासभा के 71वें पूर्ण सत्र में लिया गया। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन के सम्मेलन में 22 जून, 2013 को इस आशय का प्रस्ताव रखा गया।

खेती ज्यादातर छोटे और सीमांत किसान करते हैं, जो आवश्यक कृषि आदानों की आपूर्ति नहीं कर पाते। हमारे देश में तिलहनी फसलों से तेल निकालने की कुशलता अपेक्षित स्तर से कम है, जिस कारण पर्याप्त उत्पादन होने के बावजूद अपेक्षित मात्रा में खाद्य तेल प्राप्त नहीं हो पाता। बाजार की दशाएं भी किसानों को तिलहनी फसलों की खेती करने से लगभग रोकती हैं।

तिलहनी फसलों पर मिशन

सरकार ने पिछले दो वर्षों में तिलहनी फसलों के उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए अनेक ठोस कदम उठाए हैं, जिसके उत्साहजनक परिणाम सामने आए हैं। तिलहनी फसलों और ऑयल पाम की उपज बढ़ाने के उद्देश्य से एक राष्ट्रीय मिशन लागू किया गया है, जिसके लिए बारहवीं योजना के दौरान 3,507 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। मिशन का पहला उद्देश्य तिलहनी फसलों की नई किस्मों को किसानों के बीच प्रचलित करना है, जिससे बीज प्रतिस्थापन दर में सुधार हो और उपज बढ़े। मिशन के अंतर्गत तिलहनी फसलों में सिंचित क्षेत्र को 26 प्रतिशत से बढ़ाकर 36 प्रतिशत तक पहुंचाना है और यह प्रयास भी है कि कम उपज वाली अनाज की फसलों की जगह तिलहनी फसलें उगाई जाएं। अनाज, दालों और गन्ने के साथ तिलहनी फसलों को उगाने की संभावनाएं भी खोजी गई हैं। धान और आलू की खेती के बाद खाली पड़ी भूमि पर तिलहनी फसलों को कामयाबी से उगाया जा सकता है, जिससे तिलहनी फसलों का क्षेत्र बढ़ेगा। तिलहनी फसलों की नई किस्मों के गुणवत्तापूर्ण बीज उपलब्ध कराना भी मिशन के कार्यक्षेत्र में लाया गया है। इस मिशन को केन्द्र और राज्य सरकार मिलकर लागू करेगी, जिसमें लागत की साझेदारी 75 और 25 के अनुपात में होगी।

इस समय खाद्य तेलों की जरूरतों को पूरा करने के लिए तेल–ताड़ के खाद्य तेल को इंडोनेशिया और मलेशिया से भारी मात्रा में आयात किया जा रहा है। भारत के लिए यह एक नई

2016–17 की खरीफ फसल के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य

जिंस	किस्म	2015–16 के लिए एमएसपी (रुपये/क्विंटल)	2015–16 के लिए एमएसपी (रुपये/क्विंटल)	शुद्ध बढ़ोतरी (रुपये/क्विंटल)	बढ़ोतरी प्रतिशत में	बोनस (रुपये/क्विंटल)
धान	सामान्य	1410	1470	60	4.3	–
	ग्रेड ए	1450	1510	60	4.1	–
ज्वार	संकर	1570	1625	55	3.5	–
	मलडांडी	1590	1650	60	3.8	–
बाजरा	–	1275	1330	55	4.3	–
मक्का	–	1325	1365	40	3.0	–
रागी	–	1650	1725	75	4.5	–
तूर (अरहर)	–	4625 (200 रुपये बोनस शामिल)	5050 (425 रुपये बोनस शामिल)	425	9.2	425
मूंग	–	4850 (200 रुपये बोनस शामिल)	5225 (425 रुपये बोनस शामिल)	375	7.7	425
उड़द	–	4625 (200 रुपये बोनस शामिल)	5000 (425 रुपये बोनस शामिल)	375	8.1	425
साबुत मूंगफली	–	4030	4220 (100 रुपये बोनस	190	4.7	100
सोयाबीन	पीला	2600	2775 (100 रुपये बोनस	175	6.7	100
सूरजमुखी बीज	–	3800	3950 (200 रुपये बोनस	150	3.9	100
मोथा	–	3650	3825 (100 रुपये बोनस	175	4.8	100
तिल	–	4700	5000 (200 रुपये बोनस	300	6.4	200
कपास	मध्यम रेशा	3800	3860	60	1.6	–
	लम्बा रेशा	4100	4160	60	1.5	–

* नई कीमतें 1 अक्टूबर 2016 से प्रभावी

फसल है, परंतु इससे वनस्पति तेल की अधिकतम प्राप्ति होती है, इसलिए मिशन के अंतर्गत तेल–ताड़ की उन्नत रोपण सामग्री को किसानों के बीच उपलब्ध कराने का प्रयास किया जा रहा है। तेल–ताड़ से संबंधित उत्पादन तकनीकें मानकीकृत की गई हैं और इन्हें किसानों के बीच लोकप्रिय बनाया जा रहा है, जिससे इसका क्षेत्र बढ़े तथा कुल तेल प्राप्ति में भी सुधार हो। इसी तरह वृक्ष–तिलहनों जैसे साल, महुआ, करंज, जोजोबा, जट्रोफा आदि की खेती को भी सहायता देकर प्रोत्साहित किया जा रहा है। तेल–ताड़ और वृक्ष–तिलहनों की खेती बेकार पड़ी बंजर भूमि पर भी की जा सकती है।

दलहनों की तरह तिलहनों में भी किसानों के खेतों पर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन की योजना को कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से देशभर में लागू किया जा रहा है। देश के विभिन्न भागों में स्थित करीब 300 कृषि विज्ञान केन्द्र इस कार्य को तत्परता से कर रहे हैं। वर्ष 2015–16 के दौरान कुल मिलाकर 44,000 हेक्टेयर क्षेत्रफल को शामिल करके लगभग 18,000 से अधिक अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन आयोजित किए गए। वर्ष 2016–17 के दौरान लगभग 60,000 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर 24,000 प्रदर्शन आयोजित किए जाएंगे। इस योजना में युवाओं को भी बड़ी संख्या में शामिल किया जा रहा है। इन प्रदर्शनों का उद्देश्य किसानों के खेतों पर उन्नत तकनीकी तथा फसल प्रबंध का प्रदर्शन करना है, जिससे किसान तिलहनी फसलों की नई किस्मों की उपज क्षमता को पहचान सकें और इन्हें अपनाएं।

नई योजनाएं, नया विकास

वर्तमान सरकार ने किसान कल्याण को प्राथमिकता देते हुए ऐसी अनेक नई योजनाएं प्रारंभ की हैं, जिनसे दलहन और तिलहन की खेती करने वाले किसानों को लाभ होगा और इन फसलों का उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ेगी। इन योजनाओं में सर्वप्रमुख है प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, जिसके अंतर्गत 'हर खेत तक पानी पहुंचाने' का प्रयास किया जा रहा है। इसमें सूक्ष्म सिंचाई की नई तकनीकों को भी शामिल किया गया है। बेहतर मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए सॉयल हेल्थ कार्ड की योजना देश के हर किसान को लाभ पहुंचाने वाली है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना किसानों के कल्याण की सबसे प्रभावशाली योजना बनकर उभरी है। फसल का पूरा बीमा होने के कारण अब तिलहन और दलहन की खेती करने वाले किसान अपने को सुरक्षित महसूस करते हुए इनकी खेती करने से हिचकेंगे नहीं। इसी तरह हाल में ई–राष्ट्रीय कृषि बाजार की योजना लागू की गई है, जिससे किसानों को अपनी फसल की वाजिब कीमत मिल सके। आशा है कि इन प्रयासों से हमारा देश दलहनों और तिलहनों में आत्मनिर्भरता की ओर तेजी से कदम बढ़ा सकेगा।

(पूर्व प्रधान संपादक (हिंदी प्रकाशन), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, पूसा रोड नई दिल्ली।)
ई–मेल :jgdsaxena@gmail.com

दलहन-तिलहन में आत्मनिर्भरता के लिए दूरगामी नीति

—सुरेंद्र प्रसाद सिंह

भारत दुनिया का सबसे बड़ा दलहन उत्पादक देश होने के साथ दालों की खपत में भी पहले स्थान पर है। मांग के मुकाबले खपत कहीं अधिक है। दाल की पैदावार पिछले एक दशक के दौरान औसतन 1.7 करोड़ टन के इर्द-गिर्द ही टिकी हुई है। हालांकि सरकारी प्रयासों से चालू फसल वर्ष 2016-17 में दालों की पैदावार 2.2 करोड़ टन पहुंचने का अनुमान लगाया जा रहा है। तिलहन मिशन का लक्ष्य तिलहन की पैदावार को 2.90 करोड़ टन से बढ़ाकर 3.55 करोड़ टन करने का है।

सत्तर के दशक में हरितक्रांति के बजाए गए बिगुल से देश खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर तो हो गया है। गेहूं, चावल समेत अन्य अनाज वाली फसलों की खेती को जबर्दस्त प्रोत्साहन मिला। किसानों ने अपने खेतों में चावल व गेहूं की खेती को ही तरजीह देनी शुरू कर दी। लेकिन इसके चलते दलहन व तिलहन की खेती बुरी तरह नजरअंदाज हुई। साल–दर–साल घरेलू जरूरतों के लिए खाद्य तेल और दालों का आयात बढ़ने लगा। नतीजा यह हुआ कि देश की खाद्य सुरक्षा बुरी तरह प्रभावित होने लगी। दाल व खाद्य तेल की मांग को देखते हुए हमारी आयात निर्भरता लगातार बढ़ती जा रही है। इसका असर देश के खजाने पर भी पड़ना शुरू हुआ और वित्तीय बोझ बढ़ा है। दाल व खाद्य तेलों की घरेलू खपत को पूरा करने के लिए प्रति वर्ष एक लाख करोड़ रुपये से अधिक की विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ रही है। इसके बाद भी कभी दाल तो कभी खाद्य तेल महंगाई का सबब बनने लगे हैं। देश के नीति नियामकों के लिए यह एक गंभीर चिंता का विषय हो गया है। इस समस्या से निजात पाने और देश को दलहन व खाद्य तेल के मामले में आत्मनिर्भर बनाने के लिए केंद्र की राजग सरकार ने नए सिरे से सकारात्मक पहल की है, जिसके नतीजे जल्दी तो नहीं लेकिन दूरगामी परिणाम जरूर देंगे।

भारत दुनिया का सबसे बड़ा दलहन उत्पादक देश होने के साथ दालों की खपत में भी पहले स्थान पर है। मांग के मुकाबले खपत कहीं अधिक है। दाल की पैदावार पिछले एक दशक के दौरान औसतन 1.7 करोड़ टन के इर्द–गिर्द ही टिकी हुई है। जबकि बढ़ती आबादी और सुधरते जीवन–स्तर के चलते दाल की मांग 2.5 करोड़ टन के शीर्ष तक पहुंच गई है। मांग–आपूर्ति के इस अंतर को पूरा करने के लिए आयात ही एकमात्र सहारा है। हालांकि सरकारी प्रयासों से चालू फसल वर्ष 2016–17 में दालों की पैदावार 2.2 करोड़ टन पहुंचने का अनुमान लगाया जा रहा है।

यही वजह है कि दालों का निर्यात करने की जगह हमारी आयात निर्भरता हर साल बढ़ती ही जा रही है। दरअसल, खेती में हमारा रुझान दलहन खेती की तरफ नहीं के बराबर रहा। दलहन की पैदावार में मध्य प्रदेश पहले स्थान पर है, जबकि महाराष्ट्र दूसरे और राजस्थान तीसरे स्थान पर है। इन राज्यों की

दलहन पैदावार में कुल भागीदारी में मध्य प्रदेश की 25 फीसदी, महाराष्ट्र की 16 फीसदी और राजस्थान की 12 फीसदी भागीदारी है। सरकार ने दलहन की खेती को बढ़ावा देने के लिए ही वर्ष 2016 को दलहन वर्ष घोषित किया है। मांग–आपूर्ति के बढ़ते दायरे के चलते घरेलू बाजार में दालों के मूल्य सातवें आसमान पर पहुंच गए हैं। आपूर्ति बढ़ाने के लिए सरकार कई दक्षिण अफ्रीकी देशों में दलहन खेती की संभावनाएं भी तलाश रही है।

पिछले चार दशक में दलहन की खेती का रकबा सिर्फ 4.5 फीसदी बढ़ा है। यानी 1970 की हरितक्रांति में दलहन की खेती 2.25 करोड़ हेक्टेयर में होती थी, जो अब बढ़कर अधिकतम 2.52 करोड़ हेक्टेयर में होने लगी है। यह कुल खेती वाली जमीन का सिर्फ 13 फीसदी ही है। इसमें भी 90 फीसदी खेती असिंचित क्षेत्रों में होती है। न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) का प्रोत्साहन न मिलने से किसानों ने दलहन फसलों की खेती से मुंह मोड़ना शुरू कर दिया। किसानों का ध्यान दलहन फसलों की जगह चावल व गेहूं के साथ नगदी फसलों गन्ना, कपास और सोयाबीन जैसी फसलों की ओर है।

दलहन की कुल पैदावार भी उत्साहजनक नहीं है। 1970 में दलहन का कुल उत्पादन जहां 1.2 करोड़ टन था, जो वर्ष 2014 में बढ़कर अधिकतम 1.9 करोड़ टन हो गया। लेकिन फिर यह घटकर 1.72 करोड़ टन पर आ गया है। जबकि दालों की मांग में लगातार इजाफा हो रहा है। दाल वाली फसलों की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में भी कोई खास सुधार नहीं हो पाया है। पिछले चार दशक में उत्पादकता में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ है। 1970 में दलहन की उत्पादकता 524 किलो प्रति हेक्टेयर थी, वही वर्ष 2013 में उत्पादकता 789 किग्रा. प्रति हेक्टेयर रही, वर्ष 2014 में 785 किग्रा और वर्ष 2015 में 744 किग्रा आंकी गई। इसके विपरीत पड़ोसी देश चीन में दलहन फसलों की उत्पादकता 3500 किलो तक पहुंच गई है। बांग्लादेश और म्यांमार जैसे देशों की उत्पादकता के मुकाबले में हम पीछे हैं।

फायदेमंद होगी दलहन खेती : इसकी खेती में लागत कम लगती है। लेकिन उपज के मूल्य बहुत अच्छे मिलने लगे हैं। इतना ही नहीं, दलहन खेती से जमीन की उर्वरा क्षमता में अप्रत्याशित वृद्धि हो जाती है। उपजाऊ ताकत बढ़ने से दूसरी फसलों की उपज भी बढ़ जाती है। दरअसल दलहन फसलों की जड़ों में स्थित बैक्टीरिया हवा से नाइट्रोजन लेकर जमा करती है। दलहन फसलों से खेत में खतपतवार समाप्त हो जाते हैं।

दालों में प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है, जो प्रोटीन के अन्य स्रोतों के मुकाबले सस्ती होती है। भारत जैसे देश में शाकाहारी लोगों के लिए दालें मुफीद साबित होती हैं। दालों में खनिज, विटामिन, लौह और जिंक की अच्छी मात्रा पाई जाती है।

दलहन खेती को प्रोत्साहन

- केंद्र सरकार ने दाल की बढ़ती मांग के मद्देनजर इसे प्रोत्साहन देने का फैसला किया है। इसी के तहत न्यूनतम समर्थन मूल्य में उत्साहजनक वृद्धि की है। खुले बाजार में दालों के मूल्य अनुपात में ही समर्थन मूल्य निर्धारित किए जा रहे हैं। जबकि इसके पहले दलहन फसलों के मामले में सरकार का यथोचित समर्थन नहीं मिलने से भी न इन फसलों का रकबा बढ़ा और न ही उत्पादकता। खुले बाजार और न्यूनतम समर्थन मूल्य के बीच तालमेल का सर्वथा अभाव रहा है।
- दालों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए पूर्वी क्षेत्र के राज्यों में धान की खेती के बाद परती छोड़े जाने वाले खेतों में दलहन खेती को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।
- ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है।
- धान की खेती के साथ मेड़ों पर अरहर की खेती को प्रोत्साहित किया गया है।
- देश के पांच सौ से अधिक कृषि विज्ञान केंद्रों पर दलहन फसलों का प्रदर्शन किया जा रहा है।
- डेढ़ सौ कृषि विज्ञान केंद्रों को दलहन बीज का केंद्र बनाया जा रहा है।
- ब्रीडर सीड (जनक बीज) का अधिक से अधिक उत्पादन।

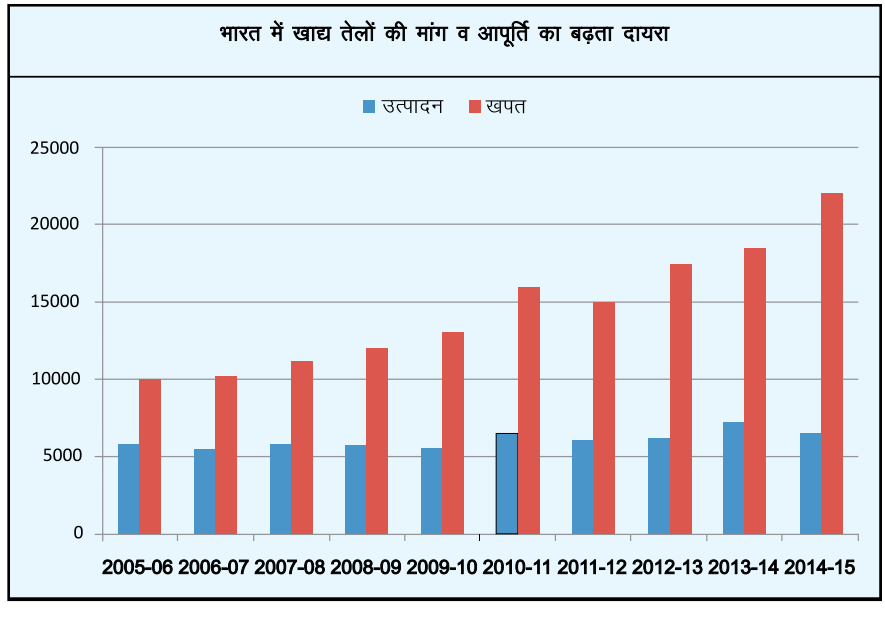

खाद्य तेलों की बढ़ती आयात निर्भरता

(प्रतिशत में)

2005-06	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15
38.95%	43.33%	43.94%	54.99%	59.13%	51.42%	57.85%	58.84%	58.60%	67.33%

- दलहन फसलों के बीजों का मिनी किट किसानों के बीच वितरित किया जा रहा है।
- राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों व जैव–उर्वरक व बायो एजेंट यूनिट्स बनाई जा रही हैं।
- दलहनी फसलों की खेती के लिए सिंचाई की सुविधा मुहैया कराने की योजना है।

पीली क्रांति से रसोई होगी गुलजार?

तिलहन फसलों की खेती को प्रोत्साहन देकर खाद्य तेलों में आत्मनिर्भर बनने की दिशा में देश चल पड़ा है। लेकिन रास्ता बहुत लंबा है और चुनौतियां उतनी ही गंभीर हैं। इनसे पार पाने के लिए सतत प्रयास जारी रखने होंगे। देश में खाद्य तेलों की कुल खपत का 70 फीसदी से अधिक खाद्य तेल आयात होता है, जिस पर तकरीबन 80 हजार करोड़ रुपये खर्च होते हैं। नीतिगत फैसलों और किसानों को भरपूर प्रोत्साहन से ही आयात की गति रोकी जा सकती है।

सरकार ने पीली क्रांति की घोषणा तो कर रखी है, लेकिन तिलहन किसान इससे बहुत प्रोत्साहित नहीं हो रहे हैं। लिहाजा खाद्य तेलों के मामले में आयात निर्भरता बढ़ती ही जा रही है, जो हमारी खाद्य सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा तो है ही, किसानों के हितों पर गंभीर चोट पहुंचा रही है। खाद्य तेलों के मामले में आत्मनिर्भर होने के लिए ठोस नीतिगत फैसले के साथ देश के किसानों की मेहनत पर भरोसा रखने की जरूरत है।

कोई दो दशक पहले तक देश खाद्य तेल के मामले में पूरी तरह आत्मनिर्भर था। कभी–कभार ही कुछ खास तरह के खाद्य तेलों का आयात किया जाता था, जो कुल खपत का तीन से चार फीसदी तक होता था। लेकिन नीति नियामकों की नासमझी और अदूरदर्शिता के चलते हालात इतने अधिक खराब हो गये हैं कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा खाद्य तेल आयातक बन गया है।

आयात निर्भरता का आलम यह है कि हर साल खाद्य तेलों का आयात बढ़ रहा है। इंडोनेशिया, मलेशिया एवं ब्राजील जैसे देशों की खाद्य तेल कंपनियां हमारे किसानों व उनकी तिलहन खेती पर भारी पड़ने लगी हैं। किसानों के खेतों से तिलहन गायब होने लगा है।

दरअसल, किसानों के लिए तिलहन की खेती फायदेमंद नहीं रह गई है। उपभोक्ताओं को सस्ते खाद्य तेल मुहैया कराने के लिए विलायती खाद्य तेलों को मंगाने का सरकारी फैसला तिलहन खेती को चट कर रहा है। हालात निरंतर और भी खराब होने लगे हैं। दाल और खाद्य तेलों के आयात पर एक लाख करोड़ रुपये की भारी धनराशि खर्च हो रही है। इसे रोकने के प्रयास विफल हो रहे हैं। घरेलू खाद्य तेलों के मुकाबले आयातित खाद्य तेल बहुत सस्ते पड़ते हैं। लिहाजा घरेलू किसानों का तिलहन खेती से मोहभंग हो गया है। तिलहन की जगह किसान दूसरी फसलों की खेती करने लगा है। जबकि बढ़ती आबादी और जीवन–स्तर के चलते खाद्य तेलों की मांग में भारी इजाफा हुआ है।

कम उपज

भारत में कुल नौ तरह की तिलहनी फसलें हैं, जिनमें सरसो, मूंगफली और सोयाबीन प्रमुख हैं। भारत में तिलहन की उत्पादकता बहुत कम है, जो बीस सालों से स्थिर बनी हुई है। यहां सरसो सबसे बड़ी तिलहन की फसल है। राजस्थान, हरियाणा, पंजाब,

तिलहन फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य में पिछले दो सालों में संतोषजनक वृद्धि

दलहन	वर्ष 2013–14	वर्ष 2014–15	वर्ष 2015–16	वर्ष 2016–17
अरहर	4300	4350	4625	5050
मूंग	4500	4600	4850	5225
उड़द	4300	4350	4625	5225
चना	3000	3175	3425	घोषित नहीं

* सभी आंकड़े प्रति क्विंटल/रुपये में

तिलहन फसलों के समर्थन मूल्य में मामूली वृद्धि

तिलहन	वर्ष 2013–14	वर्ष 2014–15	वर्ष 2015–16	वर्ष 2016–17
मूंगफली	4000	4000	4030	4220
सोयाबीन	2500	2500	2600	2775
सूरजमुखी	3700	3750	3800	3950

* सभी आंकड़े प्रति क्विंटल/रुपये में

उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के 60 लाख किसान रबी मौसम में इसकी खेती करते हैं। लेकिन दुनिया के अन्य देशों के मुकाबले यहां सरसो की उत्पादकता 1,000 किग्रा प्रति हेक्टेयर है। यह कनाडा, चीन और आस्ट्रेलिया की उत्पादकता के मुकाबले एक तिहाई है। उन्नतशील प्रजाति के बीज, उपयुक्त प्रौद्योगिकी और न्यूनतम समर्थन मूल्य का प्रोत्साहन न मिलने से किसानों ने भी इसकी खेती से मुंह मोड़ लिया। बाजार में आयातित सस्ते खाद्य तेलों के आगे घरेलू सरसो तेल की पूछ नहीं के बराबर है। आधुनिक प्रौद्योगिकी वाली जीएम सरसो की खेती को लेकर इन दिनों देश में जबर्दस्त विवाद छिड़ा हुआ है, जिससे वह किसानों के खेतों तक नहीं पहुंच पा रही है।

दूसरे, तिलहनों में सोयाबीन, मूंगफली, सूरजमुखी, बिनौला और तिल की खेती भी होती है। लेकिन इन खाद्य तेलों का उपयोग भी सीमित क्षेत्रों में सीमित तौर पर ही होता है। घरेलू सोयाबीन तेल के मुकाबले आयातित सोयाबीन की खपत अधिक है।

तिलहन खेती की चुनौतियां

- देश के 70 फीसदी से अधिक असिंचित रकबे में तिलहन की खेती होती है, जिसे सिंचित करने की चुनौती है।
- तिलहन की खेती में लागत कम लगाई जाती है, जबकि तिलहन फसलों का जोखिम बहुत अधिक है।
- देश के 85 फीसदी से अधिक तिलहन किसान सीमांत व छोटी जोत वाले हैं।
- उन्नतशील प्रजाति व हाईब्रिड के तिलहन बीजों की भारी कमी।
- तिलहन खेती में आधुनिक प्रौद्योगिकी को लेकर चल रहा विवाद उत्पादकता बढ़ाने की राह में रोड़ा है।
- किसानों की तिलहन की उपज की सरकारी खरीद प्रणाली का न होना, मंडी में बुनियादी ढांचे का अभाव। साथ ही सस्ते खाद्य तेलों का आयात, वैश्विक–स्तर पर खाद्य तेलों के मूल्यों का झटका आदि कुछ अन्य चुनौतियां हैं।

आयात घटाने और उपज बढ़ाने की तैयारियां

बढ़ते आयात पर काबू पाने के लिए सरकार ने 2012–17 के लिए तिलहन व पॉम ऑयल का राष्ट्रीय मिशन शुरू किया है। मिशन के तहत अच्छी प्रजाति के बीजों से पुराने बीजों को बदलने के अनुपात (सीड रिप्लेसमेंट रेशो) को बढ़ाने पर जोर दिया गया है। सिंचाई की सुविधा बढ़ाने पर जोर है, जिसे 26 फीसदी से बढ़ाकर 36 फीसदी करने का लक्ष्य है। अनाज व दलहन फसलों के साथ तिलहन फसलों की मिश्रित खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। पॉम ऑयल के पेड़ लगाने की योजना को भी तेजी से पूरा करना है।

मिशन के तहत तिलहन किसानों को दी जाने वाली वित्तीय मदद में 75 फीसदी हिस्सेदारी केंद्र की होगी, जबिक 25 फीसदी राज्यों की। खेतों पर अच्छी फसल का प्रदर्शन, बीजों के मिनी किट बांटने, अनुसंधान के अच्छे नतीजों को किसानों तक पहुंचाने में राज्यों के कृषि विश्वविद्यालय और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद व अन्य संस्थानों की मदद ली जाएगी। इसमें केंद्र की शत–प्रतिशत हिस्सेदारी होगी।

राष्ट्रीय मिशन में तीन मिनी मिशन शामिल किए गए हैं। इसके तहत पहले मिनी मिशन में तिलहन की प्रजाति को विकसित करने पर जोर है जबकि दूसरे मिशन में पॉम ऑयल की रोपाई की योजना है। तीसरे मिनी मिशन में पेड़ों पर उगने वाले तिलहन को विकसित किया जाएगा। तिलहन मिशन का लक्ष्य तिलहन की पैदावार को 2.90 करोड़ टन से बढ़ाकर 3.55 करोड़ टन करने का है।

खाद्य तेल उद्योग : खाद्य तेल उद्योग पिछले दो दशक से खूब फल–फूल रहा है। कच्चा तेल विदेशों से मंगाकर यहां रिफाइनरियों में पैकेजिंग कर बाजार में विभिन्न ब्रांडों में उतारा जाता है। यह उद्योग दिन–दूना रात–चौगुनी के हिसाब से बढ़ रहा है। इनका घरेलू तिलहन अथवा परंपरागत कोल्हू से निकलने वाले खाद्य तेल से कोई बहुत ताल्लुक नहीं है।

(कृषि व खाद्य विषयों के विशेषज्ञ।
वर्तमान में सिंह दैनिक जागरण के राष्ट्रीय ब्यूरो से जुड़े हुए हैं।)
ई–मेल : surendra64@gmail.com

दलहन-तिलहन उत्पादन

चुनौतियां और संभावनाएं

—गिरिजेश सिंह महरा, प्रतिभा जोशी, कुशाग्रा जोशी

आज दाल एवं तिलहन उत्पादन के समक्ष कई चुनौतियां हैं। आवश्यकता है कि इन चुनौतियों को अवसर बनाया जाए जिसके लिए अनुसंधान एवं विकास प्रणाली को एक लंबी अवधि के लक्ष्य के रूप में मजबूत करने की जरूरत है। अनुसंधान को बारानी क्षेत्रों पर केंद्रित करने की भी आवश्यकता है चूंकि देश में अधिकांश दाल एवं तिलहन उत्पादन शुष्क तथा बारानी क्षेत्रों में किया जाता है। इसके अलावा प्रभावी तकनीक के प्रयोग द्वारा दाल एवं तिलहन में वार्षिक उपज अंतर को पूरा करने के साथ-साथ उचित हस्तांतरण तकनीकों जैसे सूचना व संचार तकनीक इत्यादि के प्रयोग से आसानी से निकट भविष्य में देश की दाल एवं वनस्पति तेल की जरूरतों को पूरा किया जा सकता है।

कृषि ने मानव सभ्यता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। औद्योगिक क्रांति से पूर्व, मानव आबादी का अधिकांश हिस्सा कृषि में ही कार्यरत था। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की केन्द्र बिन्दु व भारतीय जीवन की धुरी है। भारतीय कृषि का इतिहास गंभीर समस्याओं से चाहे जूझता रहा हो मगर स्वर्णिम सफर का भी साक्षी रहा है। सन् 1910 में भारत 15 करोड़ जनसंख्या वाला देश था किन्तु भारत देश के पास इतना खाद्यान्न नहीं था कि हर एक नागरिक का पेट भर सके। लगातार पड़े सूखे एवं भुखमरी के कारण देश में स्वास्थ्य के हालात और बिगड़ उठे। सन 1960 में देश का खाद्यान्न उत्पादन 5 करोड़ टन पहुंच गया किन्तु यह भी पर्याप्त नहीं था। डॉ. एन. ई. बौरलौग एवं डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन के विज्ञान एवं परिश्रम ने देश में हरितक्रांति को जन्म दिया जिससे हमारे देश का खाद्यान्न उत्पादन 5 करोड़ टन से बढ़कर 15 करोड़ टन हो गया। तत्पश्चात देश के कृषि वैज्ञानिकों के शोध ने भारत को न सिर्फ खाद्यान्न में वरन् दुग्ध उत्पादन में भी विश्व के शिखर में खड़ा कर दिया और आज भारत फल एवं सब्जियों में, दूध, मसाले एवं जूट में वैश्विक–स्तर का सबसे बड़ा उत्पादक है। धान एवं गेहूं में भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है एवं विश्व के 80 प्रतिशत कृषि उत्पादों के सबसे बड़े उत्पादकों में से भारत एक है लेकिन जहां एक तरफ हमने विश्व में अपने आप को प्रमुख फसलों के उत्पादन में साबित किया है वही दूसरी ओर दाल एवं तिलहन के उत्पादन में भारत उत्पादन, आयात एवं निर्यात की समस्याओं से जूझता नजर आता है।

भारत में दलहन एवं तिलहन उत्पादन : एक परिदृश्य

भारतीय कृषि पद्धति में दाल एवं तिलहन की खेती का महत्वपूर्ण स्थान है। दलहनों में नत्रजन स्थिरीकरण का नैसर्गिक गुण होने के कारण वायुमण्डलीय नत्रजन को अपनी जड़ों में स्थिर करके मृदा उर्वरता को भी बढ़ाता है। इनकी जड़ प्रणाली मूसला होने के कारण कम वर्षा वाले शुष्क क्षेत्रों में भी इनकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है। इन फसलों के दानों के छिलकों में प्रोटीन के अलावा फास्फोरस एवं अन्य खनिज लवण काफी मात्रा में पाए जाते हैं जिससे पशुओं और मुर्गियों के महत्वपूर्ण रातब के रूप में इनका प्रयोग किया जाता है। दलहनी फसलें हरी खाद के रूप में प्रयोग की जाती हैं जिससे भूमि में जीवांश पदार्थ तथा नत्रजन की मात्रा में बढ़ोतरी होती है। दालों के अलावा इनका प्रयोग मिठाइयां, नमकीन आदि व्यंजन बनाने में किया जाता है। इन फसलों की खेती सीमांत और कम उपजाऊ वाली भूमियों में की जा सकती है। कम अवधि की फसलें होने के कारण बहुफसली प्रणाली में इनका महत्वपूर्ण योगदान है जिससे अन्न उत्पादन बढ़ाने में दलहनी फसलें सहायक सिद्ध हो रही हैं। भारत की प्रमुख

दलहनी फसलों में चना, मसूर, खेसरी, मटर, राजमा की खेती रबी ऋतु में की जाती है।

संसार में दालों की खेती 7.06 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है जिससे 6.15 करोड़ टन उत्पादन होता है। दलहनों की विश्व औसत उपज 871 किग्रा. प्रति हेक्टेयर है जिसमें फ्रांस सबसे अधिक दलहन (4219 किग्रा./हेक्टेयर) उत्पादन करता है। उसके बाद क्रमशः कनाडा (1936 किग्रा./हेक्टेयर), संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (1882 किग्रा.), रूस (1643 किग्रा./हेक्टेयर) एवं चीन (1596 किग्रा./हेक्टेयर) का स्थान है। भारत में दालों की उत्पादकता लगभग 691 किलोग्राम/हेक्टेयर है तथा दालों का उत्पादन मांग की तुलना में नहीं बढ़ रहा है। तालिका–1 से स्पष्ट है कि भारत में दालों का उत्पादन 1970–71 से 2013–14 में क्रमशः 1.18 से 1.93 करोड़ टन बढ़ा है तथा पिछले चार दशकों में दाल उत्पादन में 64 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि दाल उत्पादन का क्षेत्र केवल 11 प्रतिशत बढ़ा है। परंतु यदि हम दाल उत्पादन की तुलना खाद्यान्न उत्पादन से करें जिसमें पिछले चार दशकों में 145 प्रतिशत वृद्धि हुई है, तो दाल उत्पादन काफी पीछे खड़ा नज़र आता है। साथ ही साथ यदि खाद्यान्न उत्पादकता की तुलना दाल उत्पादकता से की जाए तो हमें ज्ञात होगा कि दाल उत्पादकता में 1970–71 से 2013–14 तक क्रमशः 524 किलोग्राम/हेक्टेयर से 691 किलोग्राम/हेक्टेयर वृद्धि हुई है। इसी अंतराल में खाद्यान्न उत्पादकता 872 किलोग्राम/ हेक्टेयर से 1930 किलोग्राम/हेक्टेयर हो गई जिससे यह साफ है कि दाल उत्पदन तथा उत्पादकता खाद्यान्न उत्पादन एवं उत्पादकता के समक्ष काफी पीछे है।

तिलहन उन फसलों को कहते हैं जिनसे वनस्पति तेल का उत्पादन होता है। विश्व में भारत तिलहन का सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत में तिलहन का व्यावसायिक फसल समूह में एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। तिलहन का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अनाज के बाद दूसरा महत्वपूर्ण योगदान है। तिलहन से निकाला गया तेल आहार में प्रयुक्त होने के अलावा बहुत सारे अन्य उत्पाद जैसे पेंट, वार्निश, वनस्पति तेल, साबुन, इत्र, इत्यादि के निर्माण में कच्चे माल के रूप में किए जाने के कारण इनकी काफी मांग है। तिलहन से तेल निकालने के उपरांत बची हुई खली का उपयोग पशुओं के चारे एवं खाद के रूप में किया जाता है। हमारे यहां तिलहन के अंतर्गत 9 प्रकार के बीज आते हैं–सरसो और तोरिया, सोयाबीन, सूरजमुखी, अरंडी, अलसी, कुसुम, मूंगफली, तिल और नाइजर। देश में कुल 9 तिलहनों में तिलहन उत्पादन वर्ष 2013–14 में 3.24 करोड़ टन रहा जिसमें 67.7 लाख टन उत्पादन के साथ मध्य प्रदेश पहले स्थान पर रहा। दूसरा स्थान राजस्थान का (66.7 लाख टन) तथा तीसरा स्थान गुजरात (62 लाख टन) का रहा। भारत मूंगफली, तिल, अरंडी, अलसी और कुसुम के उत्पादन में दुनिया में पहले स्थान पर है, रेपसीड उत्पादन में दूसरे तथा सूरजमुखी और सोयाबीन उत्पादन में चौथे नंबर पर है। हालांकि यह उत्पादकता दुनिया की औसत उत्पादकता की दो–तिहाई से भी कम है।

तालिका–1 से यह भी स्पष्ट होता है कि भारत में दाल का उत्पादन खरीफ की तुलना में रबी में अधिक होता है। विगत 20 वर्षों से दलहनों की औसत उपज अमूमन स्थिर (1990 में 580 किग्रा. प्रति हेक्टेयर से वर्ष 2010 में लगभग 607 किग्रा. प्रति हेक्टेयर तथा 2014 में लगभग 691 किग्रा. प्रति हेक्टेयर) भारत में सबसे ज्यादा कुल 77 प्रतिशत दलहन उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्यों में मध्य प्रदेश (24 %), उत्तर प्रदेश (16 %), महाराष्ट्र (14%), राजस्थान (6%), आंध्र प्रदेश (10%) और कर्नाटक (7 %) राज्य हैं। शेष 23 प्रतिशत उत्पादन में गुजरात, छत्तीसगढ़, बिहार, उड़ीसा और झारखंड राज्यों की हिस्सेदारी है।

तालिका–2 से स्पष्ट है कि चना एवं अरहर भारत में उगाई जाने वाली मुख्य दालें हैं जो कुल दाल उत्पादन का 50 प्रतिशत से ज्यादा है। विभिन्न दालों में चना सर्वाधिक उगाई जाने वाली दाल है जो 17 लाख कुल दाल उत्पादन का लगभग 40 प्रतिशत है। अरहर का उत्पादन 17 लाख टन से 31 लाख टन बढ़ा है परंतु कुल दाल उत्पादन में अरहर का भाग 21 से 17 प्रतिशत घटा है।

दाल तथा तिलहन उत्पादन की चुनौतियां एवं अवसर

दाल तथा तिलहन का आयात : एक बड़ी चुनौती

देश में दालों की कमी कोई नई बात नहीं है क्योंकि उत्पादन की तुलना में खपत अधिक होती है। देश में दालों की वार्षिक खपत लगभग 180 लाख टन है जबकि उत्पादन 130 से 148 लाख टन के बीच घूम रहा है। इस प्रकार देश में 30–40 लाख टन दालों की कमी पड़ती है। अपनी खपत को पूरा करने के लिए भारत को प्रतिवर्ष 25–30 लाख टन दालों का आयात करना पड़ता है। वर्तमान में दालों की कीमतें आसमान छू रही हैं इससे देश में दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता भी कम होती जा रही है। वर्ष 1951 में प्रति व्यक्ति दालों की उपलब्धता 60 ग्राम थी जो वर्ष 2010 में घट कर 34 ग्राम के आसपास आ गई जबकि अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों के अनुसार यह मात्रा 80 ग्राम होनी चाहिए। विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा विश्व खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 104 ग्राम दालों की संस्तुति की गई है। दालों की उपलब्धता बढ़ाने और इनके दामों पर अंकुश लगाने के लिए भारत सरकार ने दालों के निर्यात पर 2006 से लगी पाबंदी को बढ़ा दिया है। भारत में प्रति व्यक्ति कम से कम दालों की न्यूनतम उपलब्धता 50 ग्राम प्रतिदिन तथा बीज आदि के लिए 10 प्रतिशत दलहनें उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वर्ष 2030 तक 3.2 करोड़ टन दलहन उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है जिसके

तालिका–1 : भारत में खाद्यान्न एवं दालों का कुल क्षेत्र, उत्पादन एवं उत्पादकता

	1970-71	1980-81	1990-91	2000-01	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14
क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)									
दाल	226	2250	2470	2030	2330	264	245	233	252
कुल खाद्यान्न उत्पादन में भाग (%)	18.2	17.8	19.3	16.8	19.2	20.8	19.6	19.3	20
खरीफ	95	104	115	106	106	123	112	100	101
रबी	131	121	132	97	127	141	133	133	151
कुल खाद्यान्न उत्पादन में भाग (%)	1243	1267	1278	121	1213	1267	1248	1208	1260
उत्पादन (लाख टन)									
दाल	118	106	143	110	147	182	171	184	193
कुल खाद्यान्न उत्पादन में भाग (%)	10.9	8.2	8.1	5.6	6.77	7.4	6.6	7.1	7.3
खरीफ	39	38	54	44	42	71	61	59	60
रबी	79	68	89	660	105	111	110	124	133
कुल खाद्यान्न	1084	1296	1764	19680	2181	2445	2593	2571	2648
उपज (किलोग्राम/हेक्टेयर)									
दालें	5240	4730	5780	5440	612	6250	6590	6300	6910
खरीफ	4100	3610	4170	4170	449	5570	4780	3970	5780
रबी	6070	5710	6720	6040	751	6880	8040	8230	7900
कुल खाद्यान्न	8720	10230	13800	16260	1756	18600	19090	17980	19300

स्रोतः आर्थिक सर्वेक्षण, भारत सरकार, नई दिल्ली

लिए हमें वार्षिक उत्पादन में 4.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की बढ़ोतरी प्राप्त करनी होगी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि दलहनी फसलों की खेती भी अच्छी भूमि में बेहतर सस्य प्रबंधन के आधार पर की जाए। तालिका–3 से स्पष्ट है कि काबुली चना का दालों के निर्यात में सर्वाधिक भाग है (2015–16 के कुल दाल निर्यात का 84.87 प्रतिशत)। वर्ष 2014–15 में भारत ने 4584.84 हजार टन आयात किया जोकि वर्ष 2015–16 में बढ़कर 5797.77 हजार टन हो गया जिसमें मटर, मसूर, मूंग, तूर तथा काबुली चना सम्मिलित हैं (तालिका–4)।

देश के तिलहन उत्पादन में 1971–72 और 2007–08 के बीच तीन गुना (9 मीट्रिक टन से 29 मीट्रिक टन) बढ़त हुई लेकिन वर्ष 2009–10 में इसमें गिरावट आ गई। कुल उपलब्धता में खाद्य तेलों के आयात (घरेलू उत्पादन तथा आयात) का अनुपात जोकि 1970–71 में 3 फीसदी था, 2009–10 में 56 प्रतिशत तक बढ़ गया। साथ ही खाद्य तेलों के घरेलू उत्पादन में भी वित्तवर्ष 1971–72 में 2.5 लाख टन से 2008–09 में 6.8 लाख टन तक वृद्धि हुई। हालांकि उत्पादन में इस वृद्धि द्वारा देश में खाद्यान्न तेल की मांग को पूरा नही कर पाने के कारण भारी मात्रा में तेल का आयात किया गया। भारतीय भोजन में प्रति व्यक्ति वसा एवं तेल की वार्षिक उपलब्धता केवल 6 किलोग्राम है, जबकि विश्व की उपलब्धता औसतन 18 किलोग्राम है। हालांकि भारत में 2012–13 में मौजूदा 14.3 किलोग्राम प्रति व्यक्ति खपत वैश्विक औसत 24 किलोग्राम प्रति व्यक्ति से काफी कम है परंतु खाद्य तेल की मांग देश में तेजी से बढ़ रही है। भारत में कुल कृषि उत्पादक क्षेत्र में लगभग 10 प्रतिशत क्षेत्र में इसकी खेती की जाती है। देश के कुल कृषि उत्पाद का लगभग 10 प्रतिशत भाग तिलहन फसलों से प्राप्त होता है। तिलहन फसलों की मांग तथा आपूर्ति में काफी अंतर होने के कारण भारत में वनस्पति तेल का आयात प्रतिवर्ष भारी मात्रा में किया जाता है (तालिका–5)।

तकनीकी चुनौतियां

यद्यपि आई.सी.ए.आर, कृषि विश्वविद्यालयों और देश–भर में सार्वजनिक और निजी संस्थानों के माध्यम से दाल एवं तिलहन की नई उच्च उपज देने वाली किस्मों/संकर प्रजातियों और उत्पादन प्रौद्योगिकियों को विकसित किया गया है, वहां अभी भी अधिक उपज देने वाली किस्मों/संकर प्रजातियों और उत्पादन प्रौद्योगिकियों, जो वर्षा–आधारित क्षेत्रों में उच्च स्थिर पैदावार देने के साथ कीट और रोगों से प्रतिरोधित हो, की बड़ी संख्या में कमी है। कटाई के बाद नुकसान को रोकने के लिए उचित कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी की भी कमी है जिससे तिलहन का उत्पादन काफी हद तक प्रभावित हो रहा है। साथ ही साथ नीलगाय

तालिका–2 : भारत में मुख्य दालों का उत्पादन

(लाख टन में)

फसलें	2010-11	2011-12	2012-13
दालें	182.4	170.9	184.5
चना	822	77	88.8
भाग (%)	45.1	45.1	48.1
अरहर	28.6	26.5	30.7
भाग (%)	15.7	15.5	16.6
अन्य दालें	71.6	67.4	65
भाग (%)	39.3	39.4	35.2

स्रोतः आर्थिक सर्वेक्षण, भारत सरकार, नई दिल्ली

द्वारा होने वाले नुकसान के डर से भी काफी किसान दाल उत्पादन नहीं करना चाहते।

आज वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए उन्नत दाल एवं तिलहन की प्रजातियों के विकास की आवश्कता है जो पैदावार देने के साथ कीट और रोगों से प्रतिरोधित हो। नीलगाय द्वारा होने वाले नुकसान को कम से कम करने हेतु नवीनतम तकनीकों के प्रसार की सख्त जरूरत है।

सामाजिक–आर्थिक चुनौतियां

देश में अधिकतर छोटे एवं सीमांत किसान बारानी भूमि में तिलहन की पैदावार कर रहे हैं जोकि विभिन्न आदानो में निवेश कम ही कर पाते हैं। इसके अलावा, तिलहन, वर्षा–आधारित परिस्थितियों में उच्च जोखिम भरी फसलें होती हैं। फलस्वरूप निम्न फसल प्रबंधन प्रणाली के तहत तिलहन का उत्पादन भी काफी कम हो पाता है। इस प्रकार खेत की खराब आर्थिक हालत के कारण, उत्पादन प्रौद्योगिकी में सुधार का पूरा फायदा किसानों द्वारा उठाया नहीं जा रहा है तथा किसान दाल एवं तिलहन की जगह धान, गेहूं को लगाना जादा पसंद करते हैं।

आज एक नवीनतम कृषि प्रसार की जरूरत है जो किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को समझकर दाल एवं तिलहन की नवीनतम तकनीकों को किसानों तक समयानुसार पहुंचाए। साथ ही साथ हमें अपने बाज़ारों का भी सशक्तिकरण करना होगा ताकि किसानों को दाल एवं तिलहनों में भी धान, गेहूं की तुलना में अच्छा मुनाफा हो तभी किसान दाल एवं तिलहन की खेती करना चाहेगा।

संगठनात्मक और ढांचागत चुनौतियां

उच्च गुणवत्ता के बीज का अपर्याप्त उत्पादन और वितरण, आदानों जैसे सिंचाई, ऋण आदि की समय पर आपूर्ति ना होना तथा शोधकर्ता द्वारा किसानों को प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण समय पर ना हो पाना, भंडारण, ग्रेडिंग और तिलहन के विपणन की जानकारी ना होना इत्यादिकारक दाल एवं तिलहनों के कम उत्पादन के लिए जिम्मेदार हैं।

गांव में सुद्रण भंडारण सुविधा तथा सहकारिता के विकास की आवश्यकता है ताकि दाल एवं तिलहन में होने वाली कटाई के बाद बरबादी को न्यूनतम किया जा सके।

निष्कर्ष

नीतिगत मुद्दों के अंतर्गत दाल एवं तिलहन की खेती को प्रोत्साहित करने के लिए भारत सरकार द्वारा कई कदम उठाए गए हैं। उदाहरण के लिए, दाल एवं तिलहन के समर्थन मूल्य खरीफ और रबी सीजन में मौसम बुवाई से पहले घोषित किए जाते हैं। किसानों द्वारा संकट बिक्री को रोकने के लिए राज्यों द्वारा नेफेड और अन्य सहयोगी संगठन के माध्यम से बाजार को समर्थन देने की पेशकश की गई है। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड भी दाल एवं तिलहन के क्षेत्र में मदद करने के लिए समर्थन दे रहा है। प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी में सुधार के द्वारा तेल की दोहन क्षमता में वृद्धि की जा सकती है। सॉल्वेंट एक्सट्रेक्शन विधि के प्रयोग से तिलहन की बर्बादी को कम करने का प्रयास किया जा रहा है। तिलहन से तेल निकालने के उपरांत बची हुई खली, जो प्रोटीन में बहुत समृद्ध है, को परिष्कृत कर मानव उपभोग और साथ ही मवेशियों और मुर्गियों के लिए चारे के रूप में उपयोग पर अन्वेषण किया जा रहा है।

तालिका–3 : भारत द्वारा मुख्य दालों का निर्यात (हजार टन)

दाल/वर्ष	2014-15	कुल दाल निर्यात में भाग	2015-16	कुल दाल निर्यात में भाग	2016-17 (अप्रैल–जून)	कुल दाल निर्यात में भाग
मटर	3.91	1.76	6.44	2.52	2.61	4.56
काबुली चना	190.23	85.64	216.93	84.87	40.62	71.01
मूंग /उर्द	4.25	1.91	6.39	2.5	1.63	2.84
मसूर	7.98	3.59	11.77	4.60	7.42	12.97
तूर	1.22	0.55	4.02	1.57	3.63	6.34
कुल	222-14		255.60		57.20	

स्रोतः वाणिज्य विभाग, भारत सरकार

तालिका–4 : भारत द्वारा मुख्य दालों का निर्यात (हजार टन)

दाल/वर्ष	2014-15	कुल दाल निर्यात में भाग	2015-16	कुल दाल निर्यात में भाग	2016-17 (अप्रैल–जून)	कुल दाल निर्यात में भाग
मटर	1951.97	42.57	2245.39	38.72	625.40	57.24
काबुली चना	418.87	9.14	1031.48	17.79	21.43	1.96
मूंग /उर्द	622.88	13.58	581.60	10.03	222.25	20.62
मसूर	816.46	17.80	1260.19	21.73	25.02	2.30
तूर	575.22	12.54	462.71	7.98	118.20	10.82
कुल	**4584-84**		5797.77		1092.43	

स्रोतः वाणिज्य विभाग, भारत सरकार

तालिका–5 : भारत में तिलहनों का उत्पादन एवं खाद्य तेल का आयात

तेल वर्ष (नव–अक्तू)	तिलहनों का उत्पादन*	समस्त घरेलू स्रोतों से खाद्य तेलों की उपलब्धता	आयात**	खाद्य तेलों की कुल उपलब्धता
2010-11	324.79	97.82	72.42	170.24
2011-12	297.98	89.57	99.43	189.00
2012-13	309.43	92.19	106.05	198.24
2013-14	328.79	100.80	109.76	210.56
2014-15	266.75	89.78	127.31	217.09

स्रोतः कृषि मंत्रालय द्वारा जारी (दिनांक 14.08.2014) के चौथे अग्रिम अनुमान के अनुसार ** वाणिज्यिक आसूचना एवं सांख्यिकीय महानिदेशालय

भारत में आई.सी.ए.आर, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और सार्वजनिक और निजी संस्थानों द्वारा एक मजबूत अनुसंधान कार्यक्रम चलाया जा रहा है जो लगातार दाल एवं तिलहन की नई संकर किस्मों और प्रौद्योगिकियों का निर्माण कर रहे हैं। इसके अलावा वैज्ञानिकों द्वारा दाल एवं तिलहन की उपज क्षमता में वृद्धि, तेल की मात्रा बढ़ाने, फसल अवधि को कम करने, प्रजनन कीट और रोग प्रतिरोधी किस्मों की उपलब्धता, नाभिक और प्रजनक बीजों का बड़े पैमाने पर उत्पादन, तिलहन की खेती के लिए उपयुक्त औजारों के विकास, तिलहन और तेल, इंटर और अनुक्रमिक फसल प्रणाली, एकीकृत खरपतवार नियंत्रण के भंडारण के लिए प्रौद्योगिकियों का विकास, मूंगफली में एफ्लाटोक्सीन को कम करने और तेल की गुणवत्ता पर विभिन्न आदानों के प्रभाव का अध्ययन आदि पर अनुसंधान किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त विभिन्न अनुसंधान केंद्रों, कृषि विश्वविद्यालयों, राज्य कृषि विभाग द्वारा बड़े पैमाने पर प्रदर्शनों और देश में प्रौद्योगिकी कार्यक्रम के हस्तांतरण के प्रयास किए जा रहे हैं।

विभिन्न विकास कार्यक्रमों जैसे राष्ट्रीय तिलहन विकास परियोजना (NODP), एक्सिलेरटेड दाल उत्पादन कार्यक्रम (A3P) के माध्यम से तिलहन तथा दाल उत्पादन को बढ़ाने हेतु उपलब्ध तकनीकों का प्रसार किया जा रहा है। ब्रीडर बीज उत्पादन जैसी मदों पर, 100 प्रतिशत केंद्रीय सहायता दी जाती है। इसी तरह भारत सरकार ने चार प्रमुख तिलहन फसलों अर्थात् मूंगफली, रेपसीड–सरसों, सोयाबीन और सूरजमुखी का उत्पादन बढ़ाने हेतु परियोजना (OPTP) चलाई है। इसके तहत इन तिलहन फसलों में पौध संरक्षण, अधिक बीज की आपूर्ति, उत्पादन और प्रौद्योगिकी आदि के हस्तांतरण के लिए किसानों को 100 प्रतिशत केन्द्रीय सहायता प्रदान की जा रही है।

भारत में तिलहनों की उपज बढ़ाने के लिए पीत क्रांति की संकल्पना की गई। तिलहनों पर तकनीकी मिशन में भारत सरकार ने 1987–88 में शुरूआत की, जिसने सहकारी समितियों, कृषि अनुसंधानों तथा ऋण प्रदान करने वाली संस्थाओं की मदद से तिलहन के उत्पादन में वृद्धि के लिए भरसक प्रयास किए हैं। टेक्नोलॉजी मिशन ने उत्पादन तकनीकों में विकास करने के साथ–साथ उत्पादन के बाद की प्रक्रियाओं जैसे–बीज प्रोसेसिंग, सम्भरण आदि को भी बेहतर बनाने का प्रयास किया। तिलहन के उत्पादन को आकर्षक बनाने के लिए सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य में भी पर्याप्त वृद्धि की है। 1989 में कृषि लागत एवं कीमत आयोग ने तिलहन की वसूली कीमतों में भारी वृद्धि की।इसके अतिरिक्त सरकार ने किसानों को उन्नत किस्म के बीज उपलब्ध कराकर देश की तिलहन उत्पादकता को बढ़ाने का प्रयास किया है।

(लेखक आईसीएआर, नई दिल्ली के वैज्ञानिक कृषि प्रसार संभाग, कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र तथा भा.कृ.अनु.प. के विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा (उत्तराखंड) में वैज्ञानिक के रूप में कार्यरत हैं।)
ई–मेल : girijeshmahra22@gmail.com

IAS PCS

FOREVER ABOVE ESTD. 2005

PARAMOUNT Mission IAS

A SEGMENT OF PARAMOUNT LEAGUE

सामान्य अध्ययन, CSAT एवं वैकल्पिक विषय

प्रस्तावित कोर्स

- प्रारंभिक परीक्षा
- मुख्य–सह–प्रारंभिक परीक्षा
- मुख्य परीक्षा
- फाउंडेशन बैच

मुख्य आकर्षण

- गहन विश्लेषण
- पाठ्यक्रम का व्यापक समाहित स्वरूप
- प्रति दिवस टेस्ट आंकलन
- साप्ताहिक टेस्ट (मूलभूत, टॉपिक व समसामयिक विषयों के साथ अंतर वैषयिक उपागम)

भारत एवं विश्व का भूगोल राजीव सौमित्र, संजीव श्रीवास्तव, शमीम अनवर एवं पंकज सिंह	भारतीय समाज एवं सामाजिक न्याय डॉ. सुरेन्द्र कु. सिंह	विश्व का इतिहास, आधुनिक भारत एस.एन. दुबे	नीतिशास्त्र, सत्यनिष्ठा एवं अभिरूचि अमित कुमार सिंह, राजीव रंजन सिंह, डॉ. सुरेन्द्र सिंह, एवं संजीव त्रिपाठी

भारतीय अर्थव्यवस्था एस.के. झा, मनीष सिंह एवं उपेन्द्र अनमोल	भारतीय राजव्यवस्था वी.के. त्रिपाठी	गवर्नेन्स राजीव रंजन सिंह	विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी उपेन्द्र अनमोल	आंतरिक सुरक्षा आमोद कंठ	अंतर्राष्ट्रीय संबंध नवाब सिंह सोमवंशी
भारतीय विरासत एवं संस्कृति संजय सिंह (JNU)	पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी रवि अग्रहरी, अर्चना राठौर	सामान्य विज्ञान के.पी. द्विवेदी	आजादी के बाद का भारत अनिल कुमार श्रीवास्तव	प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत कैश आलम	आपदा प्रबंधन पंकज सिंह

प्रस्तावित वैकल्पिक विषय: भूगोल, इतिहास, राजनैतिक विज्ञान, लोक प्रशासन, दर्शनशास्त्र एवं समाजशास्त्र

"श्रद्धांजलि"

- उरी में भारतीय सैनिकों के बलिदान को Paramount Mission IAS की "श्रद्धांजलि"।
- शहीद जवानों (Defence, Para-Military & Police) का बलिदान देश के लिए अमूल्य है। पैरामाउंट के द्वारा अपनी परंपरा के अनुसार शहीद जवानों के बच्चों के लिए पूर्णतः निःशुल्क कोचिंग की उपलब्धता।
- शहीद जवानों के बच्चों को दिल्ली में आवासीय सुविधा निःशुल्क उपलब्ध।

सभी बलिदानी सैनिकों को पैरामाउंट परिवार पुनः नमन करता है।

- इसके अलावा अन्य छात्रों को Oct. 2016 से Dec. 2016 तक कोर्स में 40 प्रतिशत तक की अधिकतम छूट।

Batch starts from 15 Nov, 2016

Head Office: 872, Ground Floor (near Batra Cinema), Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009

CONTACT US: 7900000111, 7900000222, 7900000333 • www.paramountcoaching.in • enquiry@paramountcoaching.in

दलहनी एवं तिलहनी फसलों में आत्मनिर्भरता की दिशा में मिशन 2020

—शिशिर कुमार चौरसिया

दलहन-तिलहन उत्पादन में आजादी के करीब सात दशक के बाद भी हम आत्मनिर्भर नहीं हो पाए हैं। अब प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में गठित केंद्र सरकार ने एक बार फिर से इस दिशा में प्रयास शुरू किया है, जिसके फलस्वरूप कृषि मंत्रालय एवं अन्य संबंधित मशीनरी हरकत में आई है। इसके बाद भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने भी अपना मिशन 2020 बनाया है। इसमें उन तमाम उपायों का जिक्र किया गया है, जिस पर अमल करके आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सकती है।

देश के पूर्व राष्ट्रपति एवं महान विज़नरी व्यक्तित्व की अति चर्चित पुस्तक इंडिया विज़न 2020 में उन्होंने जिन पांच महत्वपूर्ण क्षेत्र पर ध्यान देने का जिक्र किया है, उनमें एक क्षेत्र कृषि भी है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में इसकी साख निर्विवाद है। डा. कलाम का कृषि क्षेत्र पर मुख्य ध्यान वैसी फसलों के उत्पादन से जुड़ा था, जिस पर अभी बहुत कम ध्यान दिया जा रहा है। जाहिर है कि इसमें दलहनी एवं तिलहनी फसलों को प्रमुख स्थान मिला है। आजादी के सात दशक बीतने के बाद भी हम इसमें आत्मनिर्भर नहीं हो पाए हैं। अब प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में गठित केंद्र सरकार ने एक बार फिर से इस दिशा में प्रयास शुरू किया है।

दलहनी फसलों की स्थिति

भारतीय कृषि पद्धति में दालों की खेती का महत्वपूर्ण स्थान है और भारत दुनिया का सबसे बड़ा दाल उत्पादक होने के साथ–साथ सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है। दलहनी फसलें भूमि को आच्छाद प्रदान करती है जिससे भूमि का कटाव कम होता है। दलहनों में नत्रजन स्थिरीकरण का नैसर्गिक गुण होने के कारण वायुमंडलीय नत्रजन को अपनी जड़ों में स्थिर करके मिट्टी उर्वरता को भी बढ़ाती है। इनकी जड़ प्रणाली मूसला होने के कारण कम वर्षा वाले शुष्क क्षेत्रों में भी इनकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है। इन फसलों के दानों के छिलकों में प्रोटीन के अलावा

फास्फोरस एवं अन्य खनिज लवण काफी मात्रा में पाए जाते हैं जिससे पशुओं और मुर्गियों के महत्वपूर्ण रातब के रूप में इनका प्रयोग किया जाता है। दलहनी फसलें हरी खाद के रूप में भी प्रयोग की जाती हैं, जिससे भूमि में जीवांश पदार्थ तथा नेत्रजन की मात्रा में बढ़ोतरी होती है। इन फसलों की खेती सीमांत और कम उपजाऊ भूमियों में की जा सकती है। कम अवधि की फसलें होने के कारण बहुफसली प्रणाली मे इनका महत्वपूर्ण योगदान है जिससे अन्न उत्पादन बढ़ाने में दलहनी फसलें सहायक सिद्ध हो रही हैं।

दलहन उत्पादन में स्थिति

दुनिया भर में दालों की खेती 7.06 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है जिससे 6.15 करोड़ टन उत्पादन होता है। दलहनी फसलों का विश्व औसत उपज 871 किलो प्रति हेक्टेयर है। भारत में दालों का उत्पादन मांग की तुलना में नहीं बढ़ रहा है। इससे बढ़ती जनसंख्या के कारण दलहनों की प्रति व्यक्ति खपत कम होती जा रही है। वर्ष 2005–06 के दौरान देश में दलहनों का कुल उत्पादन 134 लाख टन था, जो 2015–16 में बढ़ कर 164 लाख टन हो गया। एक अनुमान के मुताबिक यहां दालों की वार्षिक खपत 225 लाख टन है जबकि उत्पादन इतना नहीं हो पाता है। देश में दालों की कमी कोई नई बात नहीं है। अपनी खपत को पूरा करने के लिए भारत ने 2015–16 के दौरान 57.90 लाख टन दालों का आयात किया। हालांकि इसमें से थोड़ी मात्रा में दालों का निर्यात भी हुआ है। इस दौरान घरेलू खपत के लिए 220 लाख टन उपलब्ध हुआ। मांग और आपूर्ति में इसी अंतर की वजह से इस समय दालों की कीमतें आसमान छू रही हैं। इससे देश में दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता भी कम होती जा रही है। वर्ष 1951 में प्रति व्यक्ति दालों की उपलब्धता 60 ग्राम थी जो वर्ष 2010 में घट कर 34 ग्राम के आसपास आ गई जबकि अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों के अनुसार यह मात्रा 80 ग्राम होनी चाहिए। विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा विश्व खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 104 ग्राम दालों की संस्तुति की गई है। दालों की उपलब्धता बढ़ाने और इसके दामों पर अंकुश लगाने के लिए ही मिशन 2020 का खाका खींचा गया है।

पैदावार बढ़ाने के लिए रणनीति

भारत में दलहनी फसलों की पैदावार विकसित देशों की अपेक्षा काफी कम है। वर्ष 1971 से 2010 तक भारत में दलहनी फसलों के अंतर्गत सिर्फ 10 प्रतिशत रकबे में बढ़ोतरी हुई है। विगत 20 वर्षों से दलहनों की औसत उपज अमूमन स्थिर –1990 में 580 किलो प्रति हेक्टेयर से वर्ष 2010 में लगभग 607 किलो प्रति हेक्टेयर है। भारत में सबसे ज्यादा, 77 फीसदी दलहन उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्यों में मध्य प्रदेश 24 फीसदी, उत्तर प्रदेश 16 फीसदी, महाराष्ट्र 14 फीसदी, राजस्थान 6 फीसदी, आंध्र प्रदेश 10 फीसदी और कर्नाटक 7 फीसदी पर हैं। शेष 23 फीसदी उत्पादन में गुजरात, छत्तीसगढ़, बिहार, उड़ीसा और झारखण्ड राज्यों की हिस्सेदारी है। सरकार ने वर्ष 2030 तक 3.2 करोड़ टन दलहन उत्पादन का लक्ष्य रखा है। इसके लिए हमें वार्षिक उत्पादन में 4.2 फीसदी प्रतिवर्ष की प्रगति हासिल करनी होगी। इसके लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन–एनएफएसएम में दाल के लिए विशेष अभियान शुरू किया गया है, जिस पर 500 करोड़ रुपये से भी ज्यादा की निधि आवंटित की गई है। हालांकि इसमें अभी प्रमुख दाल उत्पादक राज्यों के उन्हीं जिलों को शामिल किया गया है, जहां दाल उत्पादन की ज्यादा गुंजाइश है। इस कार्यक्रम के शुरुआती परिणाम भी दिखे हैं। केन्द्रीय कृषि मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक वर्ष 2007–08 में दलहनी फसलों का कुल उत्पादन 147.6 करोड़ टन ही था। इसके बाद एनएफएसएम का प्रादुर्भाव हुआ और इसके सुखद परिणाम आने शुरू हो गए। तभी तो वर्ष 2013–14 में दलहनी फसलों का उत्पादन 192.7 करोड़ टन तक पहुंच गया। यही नहीं, आलोच्य अवधि में प्रति हेक्टेयर दाल उत्पादन भी 625 किलो से बढ़कर 764 किलो पर पहुंच गया। इसी के बाद इस मिशन को देश में दाल उत्पादन करने वाले 90 फीसदी इलाकों में लागू करने का फैसला लिया गया। इसके साथ ही इसके तहत देश के सभी राज्यों में 100 बीज हब बनाए जा रहे हैं जहां से किसानों को गुणवत्तायुक्त प्रमाणित बीज मिलेंगे।

दलहनी फसलों की राह की बाधा

दलहनी फसलों का भारतीय कृषि में विशेष योगदान व महत्व सर्वविदित है। ये शाकाहारी भोजन में प्रोटीन का मुख्य व सस्ता स्रोत है। इनमें गेहूं, मक्का, जौ, चावल एवं बाजरे जैसे अनाजों की तुलना में 2.3 गुना प्रोटीन होता है। हमारे शाकाहारी भोजन में प्रोटीन की अधिकांश मात्रा दालों द्वारा ही पूरी होती है। दालों का उत्पादन बढ़ाने में मुख्य बाधाएं– प्रतिकूल मौसम, पर्याप्त अनुसंधान नहीं होना, असामान्य भूमि, जैविक कारण, उन्नत किस्मों व प्रमाणित बीज का अभाव, सस्य क्रियाएं आदि हैं। इन सब बाधाओं को दूर करने के उपरांत ही सूझ–बूझ द्वारा दलहन का उत्पादन बढ़ाने की सम्भावनाएं हैं।

तिलहनी फसलों की स्थिति

दलहनी फसलों की तरह तिलहनी फसलों का उत्पादन भी बेहद महत्वपूर्ण है। दुर्भाग्यवश अभी तक इस दिशा में भी हम

आत्मनिर्भर नहीं हो पाए हैं। हालांकि 1980 के दशक में देश में पीली क्रांति चलायी गई थी और इसका असर पड़ा और वर्ष 1993–94 तक हम इस दिशा में लगभग आत्मनिर्भर हो गए थे। उस समय हमारी कुल खपत की करीब 97 फीसदी तिलहनी फसल यहां पैदा हो रही थी। लेकिन इसके बाद स्थिति लगातार बिगड़ती गई और वर्ष 2015–16 में तो कुल 280 लाख टन तिलहन का ही उत्पादन हुआ। इसमें से 95.4 लाख टन तेल ही निकलेगा, जोकि कुल घरेलू जरूरत का 50 फीसदी से भी कम है। इसलिए आलोच्य अवधि में 119.6 लाख टन तेल का आयात किया गया। इनमें से भी करीब 60 फीसदी पॉम ऑयल था। इस साल 320 लाख टन तिलहन की उपज का अनुमान है। यहां अभी हर साल करीब 2.1 करोड़ टन तेलों की खपत है, जिसमें से 50 फीसदी से भी ज्यादा का आयात करना पड़ता है।

प्रति व्यक्ति तेल उपलब्धता

प्रति व्यक्ति तेल उपलब्धता में भी भारत काफी पीछे है। हालांकि इस दिशा में काफी प्रगति हुई है, लेकिन इसके बावजूद अभी भी यहां साल में प्रति व्यक्ति तेल की उपलब्धता 17.18 किलो ही है जबकि दुनिया भर का औसत 24.86 किलो है।

कैसे हो स्थिति में सुधार

विगत दस वर्षों में मुख्यतः वर्षा पर आधारित तिलहनी फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि, आयात में कमी एवं निर्यात में वृद्धि पर काम हो रहा है। लेकिन इस प्रयास को बनाए रखने के लिए विशेष रूप से रोग एवं कीटरोधी उन्नत किस्मों का विकास करना होगा। लवणता वाली भूमियों के लिए एवं शुष्क खेती के अनुरूप विभिन्न तिलहनी फसलों की नई किस्मों का विकास करना होगा। बीज में तेल की मात्रा बढ़ाने की प्रबल संभावना को देखते हुए तेल की मात्रा पर आधारित एक मूल्य नीति तय करनी होगी, जिससे इस दिशा में चलने वाले प्रयास सफल हो सकें।

ऑयल सीड एंड पाम पर मिशन

सरकार तिलहनी फसलों की उपज बढ़ाने के लिए नेशनल मिशन ऑफ ऑयलसीड एंड पाम के तहत चालू वर्ष में 9 अरब रुपये की योजना लागू कर रही है। इसमें तीन मिनी मिशन एक साथ चल रहे हैं। मिनी मिशन एक में सरसो, मूंगफली, सूरजमुखी, सोयाबीन, अलसी, तिल, रामतिल, कुसुम और अरंडी की उपज बढ़ाने पर काम चल रहा है। मिनी मिशन दो में पामोलीन की खेतो को बढ़ावा देने के प्रयास किए जा रहे हैं जबकि मिनी मिशन तीन में नारियल और बिनौला जैसे पेड़ से मिलने वाले तेल की फसलों को बढ़ावा देने का प्रयास होगा। इन तीनों मिशनों के लिए 5.3 अरब रुपये का प्रावधान किया जा रहा है। इन उपायों पर अमल करने से 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तिलहनी फसलों के उत्पादन में करीब 35 फीसदी की बढ़ोतरी होने की उम्मीद है।

तिलहनी फसलों को बढ़ावा देने के उपाय पर कुछ आपत्ति भी

इधर जी.एम. यानी आनुवांशिक परिवर्तनों से विकसित तिलहन बीजों के जरिए उत्पादन बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं। लेकिन कुछ वैज्ञानिकों ने जी.एम. बीजों की उपादेयता पर सवाल खड़े किए हैं। उनका कहना है कि दिल्ली विश्वविद्यालय ने जो जीएम सरसो की किस्म डीएचआई 11 तैयार की है, उससे बेहतर उत्पादन देने वाली कम से कम पांच किस्में भारत में मौजूद हैं।

(लेखक अमर उजाला में विशेष संवाददाता हैं।)
ई–मेल : shishir74@gmail.com

पत्रिकाओं के शुल्क की नई दरें

क्रम सं.	पत्रिका का नाम	एक प्रति का मूल्य	विशेषांक का मूल्य	वार्षिक शुल्क	द्विवार्षिक शुल्क	त्रिवार्षिक शुल्क
1.	योजना	22	30	230	430	610
2.	कुरुक्षेत्र	22	30	230	430	610
3.	आजकल	22	30	230	430	610
4.	बालभारती	15	20	160	300	420
5.	रोजगार समाचार	12	–	530	1000	1400

दलहन एवं तिलहन उत्पादन बढ़ाने की बेहतर तकनीकें

—डॉ. वीरेन्द्र कुमार

पैदावार एवं मूल्य की दृष्टि से खाद्यान्नों के बाद दलहनी एवं तिलहनी फसलों का भारत की कृषि अर्थव्यवस्था तथा उद्योग जगत में बड़ा महत्व है। देश में दालों और खाद्य तेलों के कम उत्पादन को देखते हुए सरकार इनका उत्पादन बढ़ाने पर विशेष जोर दे रही है जिससे दलहनों और खाद्य तेलों की बढ़ती कीमतों पर काबू पाया जा सके। उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र संघ वर्ष 2016 को ''अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष'' के रूप में मना रहा है। जिससे विश्व में दालों का उत्पादन बढाया जा सके और प्रोटीन की कमी से होने वाले कुपोषण को रोका जा सके।

पैदावार एवं मूल्य की दृष्टि से खाद्यान्नों के बाद दलहनी एवं तिलहनी फसलों का भारत की कृषि अर्थव्यवस्था तथा उद्योग जगत में बड़ा महत्व है। देश में दालों और खाद्य तेलों के कम उत्पादन को देखते हुए सरकार इनका उत्पादन बढ़ाने पर विशेष जोर दे रही है जिससे दलहनों और खाद्य तेलों की बढ़ती कीमतों पर काबू पाया जा सके। इसके अलावा प्रतिवर्ष दालों एवं खाद्य तेलों के आयात के लिए भारी मात्रा में विदेशी पूंजी की जरूरत पड़ती है। विदेशी मुद्रा बचाने तथा दालों और खाद्य तेलों की मांग को पूरा करने के लिए देश में दलहनी एवं तिलहनी फसलों का उत्पादन बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। केंद्रीय बजट 2016–17 में दालों का उत्पादन बढ़ाने के लिए 500 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई है। देश में चावल व गेहूं का पर्याप्त भंडार है, परन्तु दालों की कमी रही है। परिणामस्वरूप दालों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्धता वर्ष 1961 में 65 ग्राम से घटकर वर्ष 2013 में मात्र 39.4 ग्राम रह गई। जबकि हमें अपनी प्रोटीन मांग को पूरा करने के लिए 45 ग्राम दाल प्रतिदिन चाहिए। इसी अवधि में अनाजों की उपलब्धता 399.7 ग्राम से बढ़कर 423.5 ग्राम हो गई। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2030 तक दालों की आवश्यकता 3 करोड़ 20 लाख टन होगी। इसी प्रकार भारत खाद्य तेलों का सबसे बड़ा आयातक तथा तीसरा सबसे बड़ा उपभोक्ता होने के नाते खाद्य तेल के बाजार में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। देश में प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति खपत औसतन 10.7 किलोग्राम है। अगले पांच से दस वर्षों तक खाद्य तेल की खपत में प्रतिवर्ष 3–4 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि होने की संभावना है। जिससे प्रतिवर्ष 30 लाख से 40 लाख टन अतिरिक्त खाद्य तेल की जरूरत होगी। वर्ष 2017 तक 2.04 करोड़ टन खाद्य तेल की आवश्यकता होगी। विश्व–स्तर पर दालें एवं खाद्य तेल स्वास्थ्य, पोषण और खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र संघ वर्ष 2016 को **"अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष"** के रूप में मना रहा है। जिससे विश्व में दालो का उत्पादन बढाया जा सके और प्रोटीन की कमी से होने वाले कुपोषण को रोका जा सके। दालों एवं तिलहनों के उत्पादन को कई जैविक, अजैविक कारकों के अलावा सामाजिक व आर्थिक कारण प्रभावित कर रहे हैं। इसके अलावा वर्षा का अनियमित वितरण, मानसून का देरी से आना, लगातार वर्षा होना, कभी–कभी अंतिम जून से मध्य जुलाई तक वर्षा होना इत्यादि का

उल्लेख किया जा सकता है। अतः दोनों परिस्थितियों में दलहन एवं तिलहनी फसलों की बुवाई में देरी हो जाती है। कभी–कभी फसल वृद्धि एवं विकास के समय फसल की संवेदनशील अवस्थाओं में वर्षा लम्बे समय तक नहीं होती अथवा भारी वर्षा होने पर दलहन फसलों की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। देश में उगायी जाने वाली प्रमुख दलहनी फसलों में चना, मसूर ,राजमा, मटर, खेसारी, मूंग, अरहर, लोबिया, उड़द व मोठ का महत्वपूर्ण स्थान है। हमारे देश में नौ प्रमुख तिलहनी फसलों की खेती की जाती है। इनमें मूंगफली, सोयाबीन, सूरजमुखी, अरंडी, तिल, सरसों, अलसी,रामतिल व कुसम प्रमुख हैं। इन नौ तिलहनी फसलों में सोयाबीन, मूंगफली सूरजमुखी, सरसो और तिल से खाद्य तेल प्राप्त होता है। जबकि अरंडी व अलसी से प्राप्त अखाद्य तेल का प्रयोग उद्योगों और औषधियां बनाने में किया जाता है। एक अनुमान के अनुसार हमारे देश की तेजी से बढ़ती जनसंख्या के लिए दालों एवं खाद्य तेल की आपूर्ति हेतु सन् 2020 तक क्रमशः 2.4 करोड़ और 6–6.5 करोड़ टन दलहन व तिलहन उत्पादन की आवश्यकता पड़ेगी। इन लक्ष्यों की पूर्ति करना कठिन कार्य जरूर है, परन्तु असंभव नहीं। इसके लिए कृषि वैज्ञानिकों, विषय–वस्तु विशेषज्ञों, किसानों और सरकार को दलहन व तिलहन उत्पादन बढ़ाने की रणनीति पर विचार करना होगा जिनमें फसलों के अनुसंधान, उन्नत तकनीकियों के प्रचार–प्रसार एवं खरीद मूल्य पर अधिक जोर देना होगा जिससे दलहनों व खाद्य तेलों के संकट को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

दलहन एवं तिलहन उत्पादन में गिरावट के प्रमुख कारण

1. परम्परागत रूप से किसान भाई दलहन एवं तिलहनी फसलों की खेती वर्षा के भरोसे व कम उपजाऊ जमीनों में करते हैं जहां पर पानी का भी उचित प्रबन्ध नहीं होता है।
2. बुवाई के समय मृदा में पर्याप्त नमी न होने के परिणामस्वरूप बीजों का अंकुरण ठीक से न होना। साथ ही, दलहनी एवं तिलहनी फसलों की खेती पूरी तरह से छिटकाव विधि से की जाती है। जिसके कारण प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की संख्या कम रह जाती है। परिणामस्वरूप पौधे से पौधे के बीच अधिक स्थान होने से खरपतवारों का अधिक प्रकोप होता है।
3. दलहन एवं तिलहन फसलों की खेती में रासायनिक व जैविक उर्वरकों के प्रयोग को नजरअंदाज करना।
4. मृदा में मुख्य/द्वितीयक/सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे फास्फोरस, सल्फर, जिंक व कैल्शियम की कमी की जांच न करना।
5. खाद्यान्न व नकदी फसलों की अपेक्षा दलहनी व तिलहनी फसलों की कम देख–रेख करना।
6. उन्नत सस्य तकनीकों जैसे उन्नतशील किस्मों के गुणवत्तापूर्ण बीज का अभाव व कम बीज दर का प्रयोग करना।
7. बीमारियों और कीटों के प्रकोप की रोकथाम समय पर न करना; साथ ही, खरपतवारों की रोकथाम उचित समय पर न करना; उचित समय पर कटाई व औसाई न हो पाना।
8. किसानों द्वारा दलहन व तिलहन के स्थान पर गेहूं, चावल और गन्ने जैसी अधिक लाभ देने वाली फसलों को अधिक उगाया जा रहा है। चूंकि इनकी खेती में किसानों को कम समस्याएं व अधिक फायदा होता है, जिससे दलहन फसलों का उत्पादन कम हो जाता है।
9. सामाजिक–आर्थिक कारण भी दलहन व तिलहन उत्पादन को प्रभावित करते हैं। छोटे एवं सीमांत किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण दलहन व तिलहन फसलों की खेती में प्रयोग होने वाले महंगे रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी व उन्नतशील संकर बीज की खरीद उनकी पहुंच से बाहर होते हैं।
10. इसके अलावा अनुकूल बाजार परिस्थितियों की कमी, प्रभावी न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा समय पर न होना, उचित खरीद व्यवस्था का अभाव एवं उत्पादन के लिए सरल ऋण प्रक्रिया का अभाव, उचित भंडारण व्यवस्था की कमी एवं कटाई उपरांत उपर्युक्त प्रसंस्करण तकनीकी व उन्नत मशीनों का अभाव आदि कारक दलहनी एवं तिलहनी फसलों के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।
11. फसल उत्पाद बेचने के लिए उचित व संगठित बाजारों की कमी होना।

दलहन और तिलहन उत्पादन पर मौसम का प्रभाव

बेमौसम बारिश की मार किसानों को बेहाल कर देती है। मानसून का मिजाज बिगड़ने का सीधा असर दलहनी एवं तिलहनी फसलों के उत्पादन पर पड़ता है। पिछले साल भी बेमौसम बारिश, तेज हवाओं और ओलों के पड़ने से देश के ज्यादातर इलाकों में रबी की दलहनी एवं तिलहनी फसलें बर्बाद हो गई थी। तब काबुली चना, मसूर, सरसो व चने की फसल को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचा था। बेमौसमी बारिश के कारण दालों के उत्पादन व उत्पादकता में गिरावट आ जाती है।

दलहन व तिलहनी फसलों की पैदावार बढ़ाने के उपाय

फसल चक्र

आजकल उत्तर–पश्चिम भारत में धान–गेहूं फसल चक्र के स्थान पर बेबीकॉर्न–अगेती आलू–पछेती गेहूं–मूंग व बेबीकॉर्न–अगेती सरसो–पछेती गेहूं–मूंग फसल चक्र किसानों के बीच काफी लोकप्रिय हो रहे हैं। इन फसल चक्रों के अंतर्गत किसानों को वर्ष भर आमदनी मिलती रहती है। इसके अलावा उनकी धरेलू

आवश्यकताओं जैसे अनाज, दलहन, तिलहन और चारा की भी पूर्ति होती रहती है। साथ ही फसल चक्र में मूंग की फसल लेने से मृदा स्वास्थ्य और गुणवत्ता में भी सुधार होता है। बेबीकॉर्न की फसल के उपरांत सरसो की अगेती प्रजातियों जैसे पी.एस–25 की बुवाई 15–25 सितम्बर के मध्य कर देनी चाहिए। ये प्रजातियां गर्मी के प्रति सहनशील हैं। अगेती आलू या अगेती सरसो दिसम्बर के अंत तक पककर तैयार हो जाती हैं। इन फसलों की कटाई/खुदाई उपरांत पछेती गेहूं की बुवाई करनी चाहिए। इस प्रकार गेहूं की कटाई के बाद मूंग की फसल लेनी चाहिए।

उन्नतशील/संकर किस्मों का चुनाव : दलहनी एवं तिलहनी फसलों की अधिकांश खेती में स्थानीय किस्मों की बुवाई की जाती है जिनमें पीला शिरा विषाणु रोग का भयंकर रोग होता है। इस कारण बहुत ही कम उपज प्राप्त होती है। आज देश में दलहनी एवं तिलहनी फसलों की सैंकड़ों से ज्यादा उन्नतशील/संकर किस्में जैसे चने की आईसी.सी.वी.– 96029 तथा आईसी.सी.वी. –96030, अरहर की पूसा 991 व पूसा 992, खेसारी की रतन, प्रतीक और महातेओरा, मोठ की काजरी मोठ–2 व मरू बहार, राजमा की पंत अनुपमा, पार्वती पूसा किसानों के लिए उपलब्ध हैं। सोयाबीन की पूसा–9814, पूसा 9712 ,सूरजमुखी की मोर्डन, एन.डी. एस.एच.–1, मूंगफली की आई.सी.सी.एस.–37, टी.जी.22, टी.जी.26, गिरनार–1, सोमनाथ, आई.जी.सी.एस.–44, सरसो की पूसा बोल्ड, पूसा बरानी आदि प्रमुख हैं। दलहनी व तिलहनी फसलों की ये किस्में अधिक उपज देने वाली, उच्च गुणवत्ता वाली, दानों में प्रोटीन की अधिक मात्रा, कम अवधि वाली, पीला शिरा विषाणु रोगरोधी और लागत साधनों के प्रति संवेदी हैं जिनकी बाजार में अधिक मांग है।

बारानी क्षेत्रों के लिए कम समय में पकने वाली सूखा सहनशील प्रजातियों का चुनाव करना चाहिए। दलहनी व तिलहनी फसलों की उन्नतशील/संकर प्रजातियों का चुनाव स्थानीय प्रजातियों की अपेक्षा 20–25 प्रतिशत अधिक उपज दिला सकता है। ये उन्नत/संकर किस्में न केवल अधिक उपज देती है बल्कि ये विभिन्न रोगों के प्रति प्रतिरोधी भी हैं। बीज किसी विश्वसनीय और प्रमाणित संस्थाओं से ही प्राप्त करना चाहिए। बीजों की अंकुरण क्षमता कम से कम 80 प्रतिशत अवश्य हो। सरकारी व निजी संस्थानों से इनका बीज आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। संकर किस्मों की बुवाई हेतु हमेशा नए बीज का प्रयोग करें। हाल ही में दिल्ली विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने सरसो की डी एम एच–11 एक नई जीएम किस्म विकसित की है। वैज्ञानिकों का मानना है कि नई जीएम तकनीक से विकसित सरसों की उपज सामान्य सरसो से 20–30 प्रतिशत अधिक होगी। लेकिन जैव प्रौद्योगिकी नियामक ने अभी इसकी व्यवसायिक खेती की अनुमति नही दी है।

खाद व उर्वरक प्रबंधन: किसान भाईयों को यह भ्रम होता है कि दलहनी फसलों में रासायनिक उर्वरकों को देने से फसलों की वानस्पतिक वृद्धि अधिक होती है। फलस्वरूप फूल व फलियों का निर्माण कम होता है। यह तथ्य स्थानीय/परंपरागत किस्मों पर सही हो सकता है क्योंकि परंपरागत/स्थानीय किस्मों की प्रकृति अधिक बढ़वार की होती है। परन्तु सत्य यह है कि दलहनी फसलों की संकर व उन्नतशील प्रजातियों को पोषक तत्वों की अधिक आवश्यकता होती है। बुवाई–पूर्व मृदा परीक्षण कराकर सिफारिशों के अनुसार ही रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करें। दलहनी फसलों की अधिक उपज लेने के लिए उर्वरकों के साथ–साथ देसी खाद व जैव उर्वरकों का भी प्रयोग करें। कम जीवांशयुक्त मृदाओं में 8–10 टन गोबर/कम्पोस्ट खाद बुवाई के 15–20 दिन पहले डालकर मिट्टी में अच्छी तरह से मिला दें। इससे पैदावार बढ़ने के साथ–साथ मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा भी बढ़ती है जिसका मृदा की उत्पादन क्षमता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। दलहनी फसलों में बरानी क्षेत्रों में 15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस व 25 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। जबकि सिंचित क्षेत्रों में बुवाई के समय 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 25 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

राजमा की फसल में पोषक तत्वों की अधिक आवश्यकता होती है। क्योंकि राजमा की जड़ों में नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले राइजोबियम जीवाणु की वृद्धि व विकास धीरे–धीरे होता है या फिर प्राकृतिक रूप से थोड़ा कम होता है। अतः भूमि की तैयारी के समय 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस व 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। आजकल सघन फसल प्रणाली के कारण भूमि में कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे आयरन, जस्ता व बोरोन की भी कमी होती जा रही है। नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश पोषक तत्वों का फसल उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। साथ ही, फसल को इनकी अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। अतः इन तत्वों की संतुलित एवं अनुमोदित मात्रा न दें तो उत्पादन में भारी गिरावट आ जाती है। इस तरह सूक्ष्म पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में पौधों द्वारा लिए जाते हैं। परन्तु विभिन्न पादप शारीरिक क्रियाओं में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी व अधिकता दोनों ही हानिकारक है। यदि किसान भाई फास्फोरस के लिए डी.ए.पी. का प्रयोग कर रहे हैं तो उन्हें अलग से सल्फर देने की आवश्यकता नहीं है। किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि यदि वे दलहनी फसलों में गोबर व कंपोस्ट खाद या जैविक उर्वरकों का प्रयोग कर रहे हैं, तो नाइट्रोजन की संस्तुत की गई मात्रा से 20 कि.ग्रा. कम कर दें।

साधारणतः उत्तरी भारत की मृदाओं में जिंक व सल्फर की कमी पायी जाती है। अतः इन पोषक तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए 20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट व 200 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से जिप्सम का प्रयोग बुवाई के समय करें। कैल्शियम की कमी वाली भूमियों में जिप्सम का प्रयोग अच्छी पैदावार लेने हेतु बहुत ही आवश्यक है। जिप्सम को पुष्पावस्था के समय पौधों के चारों ओर छिटक कर भी डाला जा सकता है। मृदा में सल्फर की कमी का मूंगफली के दानों में तेल की मात्रा और गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जबकि कैल्शियम की कमी से मूंगफली में दानों का भराव ठीक से नहीं हो पाता है। अतः मूंगफली की फसल में नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश को क्रमशः अमोनियम सल्फेट, सुपर फास्फेट व पोटेशियम सल्फेट के रूप में देना लाभकारी पाया गया है।

दलहनों व तिलहनों में उर्वरक प्रयोग करते समय कुछ सावधानियां

1. सिर्फ नाइट्रोजन व फास्फोरस की तुलना में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश तीनों पोषक तत्वों का प्रयोग अधिक लाभकारी पाया गया है।
2. अनुसंधानों द्वारा पाया गया है कि तिलहनी फसलों में सल्फरयुक्त नाइट्रोजन एवं फास्फोरस उर्वरकों का प्रयोग अधिक उपयोगी है।
3. असिंचित दशाओं में उर्वरकों का प्रयोग बुवाई के समय यथासंभव बीज के नीचे गहराई में डालें।
4. रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग जैविक खादों के साथ अच्छे परिणाम देता है। अतः भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने हेतु दलहनी व तिलहनी फसलों में रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक खादों एवं जैविक उर्वरकों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।
5. तिलहनी फसलों की अच्छी पैदावार हेतु सल्फर भी एक आवश्यक तत्व है। इससे तिलहनी फसलों की पैदावार व गुणवत्ता में सुधार होता है। सल्फर का सबसे सस्ता स्रोत जिप्सम है। बेहद अच्छी गुणवत्ता की फसल हेतु प्रति हेक्टेयर 30 कि.ग्रा. सल्फर आवश्यक है। इसका प्रयोग बुवाई से पहली जुताई के समय खेत में समान रूप से बिखेर कर करना चाहिए। सल्फर के प्रयोग से तिलहनी फसलों की पैदावार में 20–25 प्रतिशत तक की वृद्धि की जा सकती है।
6. साधारणतः उत्तर भारत की मृदाओं में जिंक की कमी पायी जाती है। अतः इसकी कमी को पूरा करने के लिए 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट/हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय प्रयोग करें।
7. बरानी व कम सिंचित क्षेत्रों में फास्फोरस का प्रयोग करने से पौधों की जड़ें गहराई तक जाती हैं जिससे पौधा गहराई से पानी व पोषक तत्वों का अवशोषण कर सकता है।

जैविक उर्वरकों के प्रयोग को बढ़ावा देना : दलहनी व तिलहनी फसलों में रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक उर्वरकों का भी प्रयोग किया जा सकता है। मूंगफली और सोयाबीन खरीफ मौसम में उगायी जाने वाली महत्वपूर्ण तिलहन फसलें हैं। ये दलहनी फसलों की भांति भूमि में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाती है। सोयाबीन की फसल 70–80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हेक्टेयर /वर्ष की दर से मृदा में नाइट्रोजन स्थिर करती है जिससे मृदा की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है। सोयाबीन व मूंगफली के बीजों को राइजोबियम नामक जीवाणु उर्वरक से अवश्य उपचारित करना चाहिए। इन फसलों की जड़ों में पाए जाने वाले जीवाणु वायुमण्डल में व्याप्त नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करते हैं। अतः भूमि में नाइट्रोजन की आपूर्ति कुछ हद तक बीजों को राइजोबियम से उपचारित करके की जा सकती है। किसान भाई ध्यान रखें कि दलहनी व तिलहनी फसलों के लिए राइजोबियम जीवाणु की विशिष्ट प्रजाति का ही चुनाव करें। नाइट्रोजन यौगिकीकरण क्षमता को बढ़ाने के लिए बीज उपचार बुवाई के 10–12 घंटे पहले कर लेना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई हेतु राइजोबियम जीवाणु के दो पैकेट पर्याप्त होते हैं। ये पैकेट प्रायः सभी कृषि

अनुसंधान संस्थानों व कृषि विश्वविद्यालयों में मुफ्त उपलब्ध हैं। तिलहनी फसलों की खेती में उत्पादन लागत कम करने के लिए फास्फेट घुलनशील जीवाणु (पी.एस.बी) उर्वरक का भी प्रयोग करना चाहिए जिससे मृदा में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाया जा सके। जीवाणु उर्वरक सस्ते और आसानी से उपलब्ध हैं और इनका प्रयोग भी सुगम है। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से सूरजमुखी की पैदावार में 15–20 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। तिलहनी फसलों के लिए उपयुक्त जीवाणु उर्वरकों में एजोटोवैक्टर, एजोस्पाइरिलम, बैसीलस स्पीसीज व माइकोराइजा प्रमुख हैं।

सिंचाई प्रबंधन

सामान्यतः खरीफ ऋतु में बोयी गई तिलहनों व दलहनी फसलों को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, परन्तु वर्षा का कोई भरोसा नहीं होता है। अतः खरीफ तिलहनों व दलहनों में पानी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए वर्षा ऋतु में योजनाबद्ध तरीके से जल प्रबंधन अति आवश्यक है। यदि काफी समय तक वर्षा न हो तो फसलों में हल्की सिंचाई करें। तभी किसान भाई दलहनों व तिलहनों की अधिक उपज और लाभ प्राप्त कर सकते हैं। फसल की क्रान्तिक अवस्था जैसे पौधों में फूल बनने के समय, फलिया बनते समय व फलियों में दाना बनने की अवस्था सिंचाई के प्रति संवेदनशील है जिनमें पौधों को पानी मिलना नितांत आवश्यक है। अन्यथा फलियों की पैदावार व गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन अवस्थाओं को क्रान्तिक अवस्थाएं कहते हैं। अतः किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि यदि इन अवस्थाओं पर मृदा में नमी की कमी हो तो सिंचाई अवश्य करें जो फसलोत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ आर्थिक दृष्टि से भी लाभदायक होगा। खरीफ दलहनों में वर्षा से पूर्व ही खेत की मेड़बंदी व समतलीकरण सुनिश्चित कर लेना चाहिए जिससे वर्षा जल का अधिकतम उपयोग फसलों में किया जा सके। साथ ही वर्षा–आधारित क्षेत्रों में वर्षा जल अनावश्यक रूप से बहकर नष्ट नहीं होता है। दलहनी फसलों में अनावश्यक पानी को निकालने की भी उचित व्यवस्था करें ताकि पौधे नत्रजन का सुचारू रूप से स्थिरीकरण कर सकें। इसी प्रकार अत्यधिक सिंचाई करने से फसल की वानस्पतिक बढ़वार अधिक हो जाती है जिसका दाने की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खरपतवारों की रोकथाम : दलहनी व तिलहनी फसलें चूंकि कम अवधि में पककर तैयार हो जाती हैं इसलिए फसल खरपतवार कांतिक अवस्था 15–30 दिन होती है। यदि 15 दिन बाद लम्बी अवधि तक क्रांतिक समय बढ़ाया जाए तो फसलों की उपज में 50 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। अतः फसलों में समय–समय पर निराई–गुड़ाई कर खरपतवारों को भी निकालते रहें जिससे भूमि में वायु का भी आवागमन होता रहता है। साथ ही मृदा नमी संरक्षण में भी मदद मिलती है। इसलिए किसान भाई हमेशा ध्यान रखे कि फसलों को खरपतवार प्रतिस्पर्धा के क्रान्तिक समय में खरपतवारों से मुक्त रखें। इसके लिए शुद्ध एवं साफ बीज का प्रयोग करके खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। एक ही दलहनी फसल को बार–बार एक ही खेत में उगाने से उसमें खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है तथा कीट एवं बीमारियां भी अधिक लगती है। इसलिए आवश्यक है कि एक ही दलहनी फसल को बार–बार एक ही खेत में न बोये। बुवाई हमेशा पंक्तियों में करनी चाहिए जिससे निराई–गुड़ाई यंत्र से कतारों के बीच उगे खरपतवारों को काफी सीमा तक समाप्त किया जा सके। दलहनी व तिलहनी फसलों को अन्य फसलों जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा इत्यादि के साथ अन्तःफसल के रूप में उगाने से न केवल पैदावार में वृद्धि होती है, बल्कि खरपतवारों का भी नियंत्रण हो जाता है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के अंतर्गत खरपतवार नियंत्रण के विभिन्न तरीके एक साथ अपनाने से न केवल एक ही विधि से नियंत्रण पर निर्भरता कम हो जाती है बल्कि खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण भी हो जाता है। इस विधि का प्रमुख उद्देश्य खरपतवार नियंत्रण में शाकनाशी की मात्रा को कम करना है, जिससे इन रसायनों के पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभावों से बचा जा सके।

विरलीकरण

दलहनी व तिलहनी फसलों में प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की उचित संख्या रखना अति–महत्वपूर्ण सस्य क्रिया है। जहां पर ज्यादा बीज गिर गया हो तो वहां पर पौधे गुच्छों में निकले हुए दिखाई देंगे। इन अनावश्यक पौधों को उखाड़कर पौधों की उचित दूरी सुनिश्चित करनी चाहिए। याद रहे एक स्थान से हमेशा कमजोर, रोगग्रस्त व छोटे पौधों को ही उखाड़ें।

कीट–पतंगों व रोगों से बचाव : दलहनी व तिलहनी फसलों में कीटों और रोगों के प्रबंधन हेतु किसान प्रायः जहरीले कीटनाशी एवं फफूंदनाशी का छिड़काव करते हैं। फसलों में विषाक्त रसायनों का प्रयोग स्वतः ही कई गंभीर समस्याओं को जन्म देता है जिनमें कीट–पतंगों में कीटनाशी के प्रति प्रतिरोधकता, कीटनाशक अवशेष, मृदा प्रदूषण, भूमिगत जल प्रदूषण और लाभकारी कीटों जैसे परजीवी व प्रीडेटर्स पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस तरह कीटनाशकों/फफूंदनाशकों के अत्यधिक व अनुचित प्रयोग को कम करने हेतु एकीकृत कीट प्रबंधन की सलाह दी जाती है। यह एक किफायती, पर्यावरण हितैषी और टिकाऊ उपाय है जिसमें कीटों और बीमारियो के स्तर को आर्थिक नुकसान के स्तर से नीचे रखा जाता है। उनको अधिक नष्ट नहीं किया जाता है। दुर्भाग्यवश एकीकृत

कीट प्रबंधन प्रणाली (आई.पी.एम) पर्याप्त प्रचार–प्रसार के अभाव में किसानों में अधिक लोकप्रिय नहीं हो रही है। दलहनी फसलों के लिए आई.पी.एम. के प्रमुख घटक इस प्रकार हैं– मृदाजनित रोगों से बचाव हेतु बुवाई से पूर्व *ट्राइकोडर्मा* बिरिड़ी की 62.5 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से मृदा में प्रयोग करें या 6.0 ग्राम प्रति.कि.ग्रा. की दर से बीज उपचारित करना चाहिए। इसके अलावा बीजजनित रोगों के लिए *कार्बेण्ड़ाजिम* (बाविस्टिन) 2.0 ग्राम या थाइरम 2.5 ग्राम प्रति.कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। ऐसा करने से मृदा व बीजजनित बीमारियों पर काबू पा सकते हैं। रोगी पौधों के अवशेषों को खेत में नहीं रहने दें। कालर रोट से बचाव हेतु बीज को भूमि में अधिक गहरा न बोये। गहरे बोये बीजों पर संक्रमण शीघ्र व अधिक होता है। रोगों से बचाव हेतु उचित फसल चक्र अपनाएं।

नील गायों से बचाव : देश के अनेक भागों में नील गायों का बहुत जोर है। रात के समय उनके झुंड के झुंड निकलते हैं और कई–कई सौ हेक्टेयर फसल को रातों–रात चट कर जाते हैं। इसकी रोकथाम का कोई उपाय किसानों के पास तो नहीं है। नील गायें नुकसान तो अन्य फसलों को भी पहुंचाती हैं, लेकिन उतना नहीं, जितना दलहन व तिलहन फसलों को। इससे बचाव हेतु खेतों के चारो ओर करंज व *जट्रोफा* जैसे पौधों को बाड़ के रूप में उगाना चाहिए।

प्रचार–प्रसार : दालों व तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रगतिशील किसानों के खेतों पर दलहनी व तिलहनी फसलों के अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों का आयोजन किया जाना चाहिए ताकि किसान नवीनतम किस्मों व तकनीकों की उत्पादन क्षमता और उनसे होने वाले आर्थिक लाभ के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें। और दलहनी फसलों की उन्नत खेती अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सकें । इसके लिए किसान सम्मेलन, किसान संगोष्ठी एवं किसान मेलों का भी आयोजन किया जा सकता है।

कटाई, मड़ाई एवं उपज : जब 80 प्रतिशत से अधिक फलियां पक जाएं तो फसलों की कटाई कर लेनी चाहिए। ज्यादा देर से कटाई करने पर फसल के गिरने और फलियों से दाने झड़ने का अंदेशा रहता है। कटाई उपरांत फसल को 4–7 दिन तक अच्छी तरह सुखाकर मंडाई करनी चाहिए। बीज को अच्छी तरह सुखाकर ही गोदाम में रखे।

(लेखक जल प्रौद्योगिकी केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कार्यरत हैं।)
ई–मेल : v.kumardhama@gmail.com

कटाई-उपरांत तकनीक से बचेगा करोड़ों का दलहन और तिलहन

—चंद्रभान यादव

कटाई-उपरांत तकनीक के जरिए करीब 20 फीसदी अनाज को बचाया जा सकता है। साथ ही किसानों की उपज की ग्रेडिंग बढ़ाकर उन्हें अधिक मुआवजा दिलाया जा सकता है। यही वजह है कि केंद्र सरकार की ओर से पोस्ट हार्वेस्टिंग तकनीक से किसानों को अवगत कराने की दिशा में लगातार प्रयास किया जा रहा है। इसके लिए विभिन्न तरह की परियोजनाओं का विकास किया जा रहा है। किसान पोस्ट हार्वेस्टिंग तकनीक जान सकें, इसके लिए विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की गई है।

कटाई–उपरांत तकनीक के जरिए करीब 20 फीसदी अनाज को बचाया जा सकता है। साथ ही किसानों की उपज की ग्रेडिंग बढ़ाकर उन्हें अधिक मुआवजा दिलाया जा सकता है। यही वजह है कि केंद्र सरकार की ओर से पोस्ट हार्वेस्टिंग तकनीक से किसानों को अवगत कराने की दिशा में लगातार प्रयास किया जा रहा है। इसके लिए विभिन्न तरह की परियोजनाओं का विकास किया जा रहा है। किसान पोस्ट हार्वेस्टिंग तकनीक जान सकें, इसके लिए विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की गई है। पिछले दिनों भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने देश के चौदह कृषि जलवायु क्षेत्रों में पोस्ट हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी नेटवर्क पर अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजना के तहत अध्ययन किया। इसमें पाया है कि प्रति वर्ष 20698 करोड़ रुपये का अनाज, 3877 करोड़ रुपये का दलहन और 8278 करोड़ रुपये का तिलहन बर्बाद हो जाता है। इस बर्बादी को रोकने के लिए सरकार की ओर से कई महत्वपूर्ण कदम उठाए जा रहे हैं।

खाद्यान्न की स्थिति में देश को आत्मनिर्भर बनाने और किसानों को उनकी उपज का भरपूर मूल्य मिले, इस दिशा में केंद्र सरकार की ओर से तमाम योजनाएं चलाई जा रही हैं। सरकार किसानों को जागरूक करने की दिशा में भी निरंतर काम कर रही है। इसी प्रक्रिया के तहत तैयार फसल की कटाई से लेकर अनाज तैयार करने के बीच की प्रक्रिया के बारे में भी किसानों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। कटाई उपरांत तकनीक के बारे में प्रशिक्षण देकर किसानों को यह बताया जा रहा है कि वे किस तरह से थोड़ी–सी सावधानी बरत कर अनाज को बचा सकते हैं। यह अनाज देश को दलहन, तिलहन सहित खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाएगा। इसके लिए कृषि विश्वविद्यलायों एवं कृषि से जुड़ी परियोजनाओं के जरिए किसानों को कटाई उपरांत पद्धति की तकनीकी जानकारी दी जा रही है। दरअसल पोस्ट हार्वेस्टिंग का मतलब ही है कि खेत में तैयार फसल की कटाई से लेकर मड़ाई और दाने को भंडारण तक पहुंचाने में अपनाई जाने वाली तकनीक। अभी तक किसान परंपरागत तरीके अपना रहे हैं। अब किसानों को तकनीकी रूप से सक्षम बनाया जा रहा है ताकि खेत, खलिहान और भंडारण–गृह तक पहुंचने में बर्बाद होने वाले अनाज को बचाया जा सके।

पिछले दिनों कृषि मंत्री ने कहा था कि कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय दलहन के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कई स्तर पर कार्य कर रहा है। सरकार दलहन उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए किसानों को प्रोत्साहित कर रही है और न्यूनतम समर्थन मूल्य भी बढ़ाया है। नए रेट 1 अक्टूबर 2016 से लागू हो गए हैं। इन सबके बीच हमारा प्रयास है कि खेत में तैयार फसल

मुकम्मल तरीके से किसानों के घर में पहुंचे। अगले दो सालों (2016 और 2017) में दलहन का उत्पादन 80 लाख टन बढ़ाने का लक्ष्य है। इसके लिए केंद्र सरकार ने 405 करोड़ रुपये का बजट जारी किया है। उत्पादन बढ़ाने की जिम्मेदारी और समन्वय का काम भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान (आईआईपीआर) कर रहा है। आईआईपीआर की देखरेख में ही देश के अलग–अलग राज्यों में 40 हजार प्रदर्शन होंगे। खरीफ की फसलों का प्रदर्शन 11500 एकड़ में होगा। दलहनी फसलों का प्रदर्शन भी 11500 एकड़ क्षेत्रफल में कराया जाएगा।

विभिन्न स्तर पर हुए सर्वे में यह बात सामने आई है कि फसल की कटाई से लेकर भंडारण के दौरान बीज व अनाज की करीब 25 फीसदी क्षति होती है। खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) का अनुमान है कि वैश्विक खाद्य उत्पादन में 2030 तक 40 प्रतिशत तथा 2050 तक 70 प्रतिशत तक उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है, क्योंकि कृषि क्षेत्र का कुल जीडीपी में 16 प्रतिशत योगदान होने के बावजूद आज भी हमारी आबादी का 50 प्रतिशत से अधिक कृषि पर निर्भर करता है। भारत दलहन का सबसे बड़ा उत्पादक, उपभोक्ता तथा आयातक है। **देश में दलहन उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए किसानों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। सरकार ने इस वर्ष दलहन के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) में अच्छी वृद्धि की है ताकि किसानों को उचित मूल्य मिल सके।** सभी दलहनों का समर्थन मूल्य 250 से 275 रुपये बढ़ाया है जैसे अरहर का समर्थन मूल्य 4350 से 4625 रुपये एवं चने का समर्थन मूल्य 3175 से 3425 रुपये प्रति क्विंटल किया गया है।

भारत में दलहन उत्पादन की स्थिति

भारत औसतन 245.8 लाख हेक्टेयर में दलहन की खेती करता है जिसमें वह 180.2 लाख टन दालें उत्पादित करता है। इसमें से एक तिहाई उत्पादन खरीफ दलहनों तथा 2 तिहाई उत्पादन रबी दलहनों का होता है। मध्यप्रदेश, राजस्थान तथा छत्तीसगढ़ भी प्रमुख दलहन उत्पादक प्रदेशों में सम्मिलित है। वर्ष 2016–17 के लिए भारत सरकार ने 207.5 लाख टन दलहन उत्पादन का लक्ष्य रखा है, जिसमें खरीफ दलहनों का यह लक्ष्य 72.5 लाख टन तथा 135.0 लाख टन रबी दलहनों का रखा गया है। खरीफ दलहनों के उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त करने में अच्छी वर्षा तथा दलहनी फसलों के क्षेत्र में पिछले वर्ष 2015 की तुलना में 35.6 लाख हेक्टेयर क्षेत्र की वृद्धि का भी बड़ा योगदान होगा। खरीफ दलहनी फसलों में अरहर, मूंग तथा उड़द प्रमुख है और यह खरीफ दलहनों के 84 प्रतिशत क्षेत्र में ली जाती है। खरीफ दलहनी फसलों के 82.2 लाख टन के उत्पादन का अनुमान है जो लक्ष्य से लगभग 9.7 लाख टन अधिक है। यह एक शुभ संकेत है। इस कारण अब रबी फसलों का लक्ष्य जो पूर्व में 135.0 लाख टन था, को बढ़ाकर अब 144.1 लाख टन कर दिया गया है।

आईसीएआर ने कराया सर्वे

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने देश के चौदह कृषि जलवायु क्षेत्रों में पोस्ट हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी नेटवर्क पर अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजना के तहत किए गए अध्ययन में पाया है कि प्रति वर्ष 20698 करोड़ रुपये के अनाज, 16644 करोड़ रुपये के फल, 14842 करोड़ रुपये की सब्जियां, 18987 करोड़ रुपये के पशु उत्पाद, 9325 करोड़ रुपये के मसाले, 3877 करोड़ रुपये के दलहन और 8278 करोड़ रुपये का तिलहन बर्बाद हो जाता है। सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ पोस्ट हार्वेस्ट इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी (सीफेट), लुधियाना ने फौरी तौर पर चयनित 106 जिलों में 46 कृषि उत्पादों की खेती और फसल की कटाई के बाद हुए नुकसान को लेकर किए गए अध्ययन में कहा है कि राष्ट्रीय–स्तर पर 3.9 से 6.0 प्रतिशत तक अनाज, 5.8 से 18 प्रतिशत तक फल और सब्जियां , 2.8 से 10.1 प्रतिशत तक तिलहन, 4.3 से 6.1 प्रतिशत तक दलहन, 6.9 प्रतिशत अंतरदेशीय मत्स्य, 2.9 प्रतिशत समुद्री मछलियां, 2.3 प्रतिशत मांस, 3.7 प्रतिशत पोल्ट्री उत्पाद तथा 0.8 प्रतिशत दूध नष्ट हो जाता है। इसे बचाकर हम अपनी जरूरतों को पूरा कर सकते हैं। खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय ने एक बार फिर से सीफेट को उन्हीं 106 जिलों में कृषि उत्पादों के नष्ट होने को लेकर अध्ययन करने को कहा है। इस बारे में रिपोर्ट का अभी इंतजार है। लोकसभा की कृषि से संबंधित एक समिति ने भी अपनी रिपोर्ट में कहा है कि कृषि उत्पादों की निम्न–स्तरीय प्रसंस्करण सुविधा नुकसान का प्रमुख कारण है। समिति को मिली जानकारी के मुताबिक देश में खाद्य उत्पादों का मात्र छह प्रतिशत ही प्रसंस्कृत किया जाता है। देश में फल–सब्जियों के कुल उत्पादन का केवल 2.2 प्रतिशत ही प्रसंस्कृत हो पाता है। यही हाल समुद्री उत्पादों का है, जहां केवल आठ प्रतिशत और पोल्ट्री उत्पादों में छह प्रतिशत ही प्रसंस्करण के दायरे में आता है।

कटाई उपरांत तकनीक और प्रबंधन योजना

यह केन्द्र क्षेत्रीय योजना है। योजना का उद्देश्य कृषकों को कटाई उपरांत तकनीक उपकरणों के उपयोग के लिए प्रोत्साहित करना है, जिससे कृषि उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार करके कृषकों को उपज का अधिक मूल्य दिलाया जा सके। इस कार्यक्रम के माध्यम से कृषकों को विभिन्न प्रकार के पोस्ट हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी उपकरणों के क्रय पर अनुदान दिए जाने का प्रावधान है। योजनांतर्गत 2 लाख तक के कटाई उपरांत तकनीक उपकरणों पर 40 प्रतिशत की दर से अनुदान दिया जाता है। योजनांतर्गत कटाई उपरांत तकनीक उपकरणों के प्रदर्शन एवं कृषकों को प्रशिक्षण दिए जाने का भी प्रावधान है।

खेत से भंडारण के बीच का नुकसान

भारत में अनाज और तिलहन की फसलों में तैयार फसल कटने से लेकर भंडारण तक के बीच करीब 20 फीसदी नष्ट हो जाती है।

कृषि वैज्ञानिकों का मानना है कि तैयार बीजों को बचाने के समय पर उपयुक्त उपायों को अपनाकर कीट के प्रकोप को निर्धारित सीमा के नीचे रखा जाता है। वास्तव में कीट प्रबंधन का कार्य फसल की कटाई से ही शुरू हो जाता है। इसके लिए कटाई, गहाई एवं ढुलाई में प्रयुक्त यंत्रों व साधनों को कीट मुक्त रखना चाहिए। खलिहान को भी समतल एवं साफ करके ही फसल वहां रखनी चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि फसल कटने के बाद वर्षा या अन्य कारणों से बीज व अनाज भीगना नहीं चाहिए क्योंकि भीगे अनाज व बीजों में कीटों का प्रकोप अधिक होता है। भंडारण कक्ष एवं भंडारण पात्र को कीट मुक्त रखने हेतु समुचित उपाय करना आवश्यक होता है। आधुनिक तकनीकी, इनका सही समय पर किसानों को हस्तांतरण तथा किसानों द्वारा इनका अंगीकरण इन फसलों में वृद्धि के प्रमुख कारक हैं। शोधकर्ताओं के अथक प्रयास, सरकार की ओर से सकारात्मक पहल, सहयोगी विभागों की सक्रियता, नीति निर्माताओं की सकारात्मक सोच और सबसे ऊपर किसानों की सक्रिय भागीदरी से यह वृद्धि दर प्राप्त हो पाई है। इन सभी कारणों के साथ–साथ अनुकूल वातावरण के प्रभाव को भी नकारा नहीं जा सकता। साथ ही, दलहनी फसलों की उन्नतशील प्रजातियों का विकास, गुणवत्तायुक्त बीजों की उपलब्धता, फसल प्रबंधन एवं सुरक्षा तकनीक और अन्य सहयोगी विभागों की सक्रियता की भूमिका को भी नकारा नहीं जा सकता जो कुल मिलाकर दलहन उत्पादन को बढ़ाने के मुख्य आधार रहे हैं।

दलहन के लिए बढ़े कदम

भारत सरकार ने इस वर्ष के आम बजट में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अंतर्गत दलहनी फसलों की उत्पादकता तथा उत्पादन बढ़ाने हेतु 500 करोड़ रुपये के बजट का प्रावधान रखा है, जिससे देश में दलहन सुरक्षा की ओर हम कई कदम आगे बढ़ेंगे। मुख्य रूप से उगाई जानी वाली दलहनी फसलों में चना (41 फीसदी), अरहर (15 फीसदी), उड़द (10 फीसदी), मूंग (9 फीसदी), लोबिया (7 फीसदी), मसूर एवं मटर (5 फीसदी) हैं। इसके अलावा राजमा, कुल्थी, खेसारी, ग्वार इत्यादि अन्य दलहनी फसलें भी भारत में उगाई जाती हैं। सन् 2012–13 में कुल दलहन उत्पादन लगभग 183.40 लाख टन दर्ज किया गया था जो पिछले साल की अपेक्षा 7.31 फीसदी अधिक था। यह 2013–14 में बढ़कर 192.50 लाख टन पहुंच गया। भारत में 2014–15 में दलहन उत्पादन 172.0 लाख टन रहा। अधिकांश कृषक फसल की कटाई के तुरंत बाद अपने उत्पाद को कम मूल्य पर बेच देते हैं। अपने उत्पादन का अधिक मूल्य पाने हेतु दलहन उत्पादकों द्वारा सफाई, ग्रेडिंग तथा मिंलिग जैसे प्राथमिक प्रसंस्करण करने चाहिए। आहार के लिए स्वच्छ दानों से दाल प्राप्त करना मिलिंग का प्रमुख उद्देश्य है। कृषक तथा दालों को बनाने वाले मिल मालिक मिलिंग के दौरान दानों के टूटने को रोककर अधिक लाभ अर्जित करना चाहते हैं। दलहनों की मिलिंग, कुटीर इकाइयों के अतिरिक्त, उच्च क्षमता व्यवासायिक दलहन विधायन संयंत्रों द्वारा की जाती है। कटाई से पूर्व तथा भंडारण के दौरान दानों की अवस्था, मिलिंग के समय दाल की प्राप्ति प्रभावित करता है। अधिकांश दलहनों में दालों की औसत प्राप्ति लगभग 70–72 प्रतिशत होती है। सामान्यतः दलहनों में भूसे का प्रतिशत 11–15 प्रतिशत के बीच होता है। टूटे हुए दानों सहित दाल की प्राप्ति 85–89 प्रतिशत होनी चाहिए। दाल बनाने में दानों को मजबूती से समेटे बीज आवरण को हटाना तथा बीज पत्रों को तोड़ना सम्मिलित होता है। दाल बनाने से उसकी गुणवत्ता, पाचकता तथा उसके बाह्य रूप आदि में सुधार होता है।

कटाई उपरांत सरसो की फसल

तिलहन के रूप में भारत के एक बड़े हिस्से में सरसो की खेती होती है। विभिन्न शोध रिपोर्ट से यह बात सामने आई है कि पोस्ट हार्वेस्टिंग तकनीकी की जानकारी नहीं होने की वजह से किसानों को काफी नुकसान उठाना पड़ता है। जानकारी के अभाव में तैयार फसल का दाना खेत में ही गिर जाता है। दरअसल सरसो का फल 120 से150 दिन में पककर तैयार हो जाता है। इस फसल में उचित समय पर कटाई करना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यदि समय पर कटाई नहीं की जाती है तो फमियां चटकने लगती हैं। एवं उपज में 5 से 10 प्रतिशत की कमी आ जाती है। जैसे ही पौधे की पत्तियों एवं फलियों का रंग पीला पड़ने लगे तो समझे फसल तैयार है। सरसो की फसल फरवरी–मार्च तक पक जाती है। फसल की उचित पैदावार के लिए जब 75 प्रतिशत फलियां पीली हो जाएं तब ही फसल की कटाई करें। कटाई के समय इस बात का विशेष ध्यान रखे कि सत्यानाशी खरपतवार का बीज, फल के साथ न मिलने पाए, नहीं तो इस फसल के दूषित तेल से मनुष्य में ड्रोपसी नामक बीमारी हो जाएगी। सरसो केवल टहनियों को काटकर बंडलों में बांधकर खलिहान में पहुंचा देना चाहिए। जब बीजों में औसतन 12–20 प्रतिशत आर्द्रता प्रतिशत हो जाए तब फसल की गहाई करनी चाहिए। फसल की मड़ाई थ्रेशर से ही करनी चाहिए क्योंकि इससे बीज तथा भूसा अलग–अलग निकल जाते हैं। साथ ही साथ एक दिन में काफी मात्रा में सरसो की मड़ाई हो जाती है। बीज निकलने के बाद उनको साफ करके बोरों में भर लेने एवं 8–9 प्रतिशत नमी की अवस्था में सूखे स्थान पर भंडारण करें।

कटाई के दौरान सरसो में हानि से बचाव

सरसो की उत्पादकता को बढ़ाने के लिए सरसो की बुवाई से लेकर कटाई तक होने वाली हानि को कम से कम किया जाना बहुत जरूरी है। बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए देश में सरसो की खपत बढ़ी है तथा यदि हम अपनी जरूरत पूरी कर निर्यात भी कर पाएं तो देश की अर्थव्यवस्था को लाभ होगा। इसलिए आज हम सब को मिलकर सोचना होगा कि कैसे हम सरसो में होने वाली हानि को कम करके तथा आधुनिक तकनीक का प्रयोग करके

सरसो की उत्पादकता बढ़ा सकते हैं। सरसों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए निम्न उपायों द्वारा सरसों में होने वाली हानि को रोका जा सकता है–

कटाई का समय : कटाई का समय बुआई का समय, बीज की किस्म, उत्पादन तकनीक तथा वातावरण पर निर्भर करता है। समय से पहले कटाई करने पर सरसो का कच्चा दाना जिसमे क्लोरोफिल की अधिक मात्रा होती है, प्राप्त होता है। इस कच्चे दाने में फ्री फैटी एसिड की मात्रा भी ज्यादा होती है, तथा ऐसे बीज बुवाई व प्रोसेसिंग के लिए अनुपयोगी होते हैं। इसलिए समय से पहले कटाई सरसो की उत्पादकता में हानि पहुंचाती है। वहीं समय के बाद कटाई करने से छंटाई अधिक होने से सरसो के बीज की हानि अधिक होती है।

कटाई की अवस्था : आद्रता की मात्रा बीज में परिपक्वता की पहचान है जोकि 20 फीसदी के लगभग होती है। अगले वर्ष ओस व नम हवा का फसल पर प्रभाव न पड़ा हो, जो फसल एक न हो तथा पकने में देरी हो गई हो, क्लोरोफिल की मात्रा की जांच द्वारा कटाई की अवस्था जांची जा सकती है जोकि 25 टन से अधिक तेल में नहीं होनी चाहिए।

कटाई का तरीका : भारतवर्ष में सरसो की फसल में सबसे ज्यादा नुकसान कटाई के समय होता है। यह नुकसान गलत समय पर की जाने वाली कटाई का परिणाम है। सरसो की फसल में यह नुकसान बचाने के लिए फसल का रंग सुनहरा हो जाने पर एवं बीज में आद्रता की मात्रा 20 टन के लगभग 4–5 दिन तक खेत धूप में सूखने के लिए छोड़ देना चाहिए। तथा सरसो की कम से कम ढेरियां बनानी चाहिए जिससे छंटाई की हानि कम हो।

दलहन में कटाई उपरांत तकनीक : दलहन की फसल में चने का उत्पादन कई राज्यों में बड़े पैमाने पर होता है। लेकिन कटाई उपरांत पद्धति की जानकारी नहीं होने की वजह से किसानों को काफी नुकसान उठाना पड़ता है। दरअसल जब फसल अच्छी प्रकार पक जाए तो कटाई करनी चाहिए। जब पत्तियां व फलियां पीली व भूरे रंग की हो जाएं तथा पत्तियां गिरने लगे एवं दाने सख्त हो जाएं तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई की गई फसल जब अच्छी प्रकार सूख जाए तो थ्रेशर द्वारा दाने को भूसे से अलग कर लेना चाहिए तथा अच्छी प्रकार सुखाकर सुरक्षित स्थान पर भंडारित कर लेना चाहिए। उन्नत तकनीकियों का प्रयोग कर उगायी गई फसल द्वारा 20 से 22 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। चने की एक हेक्टेयर क्षेत्र में फसल उगाने के लिए लगभग 15–20 हजार रुपये का खर्च आता है। यदि चने का बाजार भाव 3000 रुपये प्रति क्विंटल हो तो प्रति हेक्टेयर लगभग 25–30 हजार रुपये का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है। फसल को थ्रेशर द्वारा या डंडे से पीट कर दाने को भूसे से अलग कर देना चाहिए। दानों को साफ करके अच्छी प्रकार से सूखाकर जब नमी 8 से 9 प्रतिशत रह जाए तो स्वस्थ एवं अच्छे आकार के दानों का ग्रेडिंग कर लेना चाहिए। ग्रेडिंग किए गए दानों को कीटनाशक जैसे एल्यूमिनियम फास्फाइड की गोली या ईडीबी या मैलाथियोन 5 प्रतिशत चूर्ण या फेनवलरेट चूर्ण की 250 ग्राम प्रति क्विंटल की दर से मिलाकर धातु की कोठी, पक्की कोठी या पूसा कोठी में भरकर अच्छी प्रकार से बंद करके सुरक्षित स्थान पर रखकर भंडारित करना चाहिए या मैलाथियोन या डेकामैथ्रिन के एक प्रतिशत घोल से उपचारित नई बोरियों में सुरक्षित स्थान पर रखकर भंडारित करना चाहिए। इस प्रकार से उत्पादित बीज को किसान अगले वर्ष बुवाई के लिए प्रयोग कर सकते हैं।

मसूर की फसल : बिहार राज्य में मसूर की खेती 1.73 लाख हेक्टेयर तथा इसकी औसल उत्पादकता 935 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है। इसकी खेती प्रायः असिंचित क्षेत्रों में धान की फसल के बाद की जाती है। बिहार राज्य में उकेरा विधि से धान की खड़ी फसल में बीज को छिड़ककर भी बोया जाता है। रबी मौसम में सरसो एवं गन्ने के साथ अंततः फसल के रूप में लगाया जाता है। मिट्टी की उर्वराशक्ति को बनाए रखने में भी मसूर की खेती बहुत सहायक होती है। उन्नतशील उत्पादन तकनीकों का प्रयोग करके मसूर की उपज में बढ़ोतरी की जा सकती है। जब 80 प्रतिशत फलिया पक जाएं तो कटाई करके झड़ाई कर लेनी चाहिए। भंडारण से पूर्ण दानों को अच्छी तरह से सुखा लेना चाहिए। अगर किसान लोग उन्नत विधि से मसूर की खेती करे तो लगभग 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त कर सकते हैं। भंडारण के समय दानों में नमी का प्रतिशत 10 से अधिक नहीं होना चाहिए। भंडार गृह में 2 गोली अल्युमिनियम फास्फाइड या ईडी रखने से भंडार कीटों से सुरक्षा मिलती है। भंडारण के दौरान मसूर को अधिक नमी से बचाना चाहिए।

उपज तैयार होने के बाद भंडारण से पहले क्या बरतें सावधानी

सबसे पहले बीज भंडारण के लिए प्रयोग होने वाले कमरे, गोदाम या पात्र जैसे कुठला इत्यादि के सुराखों एवं दरारों को यथोचित गीली मिट्टी या सीमेंट से भर दें। यदि भंडारण कमरे या गोदाम में करना है तो उसे अच्छी तरह साफ करने के पश्चात् चार लीटर मैलाथियान या डी.डी.वी.पी. को 100 ली. पानी में (40 मि.ली. कीटनाशी एक ली. पानी में) घोलकर हर जगह छिड़काव करना चाहिए। बीज रखने हेतु नई बोरियों का प्रयोग करें। यदि बोरियां पुरानी हैं तो उन्हें गर्म पानी में 50 सें. पर 15 मिनट तक भिगोएं या फिर उन्हें 40 मि.ली. मैलाथियान 50 ईसी या 40 ग्राम डेल्टामेथ्रिन 2.5 डब्ल्यू पी (डेल्टामेथ्रिन 2.8 ईसी की 38.0 मि.ली.) प्रति ली. पानी के घोल में 10 से 15 मिनट तक भिगोकर छाया में सुखा लें और इसके बाद उनमें बीज या अनाज भरें। यदि मटके में भंडारण करना है तो पात्र में आवश्यकतानुसार उपले या गोसे डालें और उसके ऊपर 500 ग्रा. सूखी नीम की पत्तियां डालकर धुआं करें एवं ऊपर से बंद करके वायु अवरोधी कर दें। यदि भंडारण गोदाम में कर रहे

हैं तो कभी भी पुराने बीज या अनाज के साथ नए बीज या अनाज को नहीं रखना चाहिए।

भंडारण के बाद क्या बरतें सावधानी

भंडारण के कुछ कीट फसल की कटाई से पहले खेत में ही अपना प्रकोप प्रारम्भ कर देते हैं। ये कीट फसल के दानों पर अपने अंडे देते हैं जो आसानी से भंडारगृह में पहुंचकर हानि पहुंचाते हैं। इस प्रकार के कीटों में अनाज का पतंगा प्रमुख है। ऐसे कीटों से बीजों को बचाने हेतु एल्युमिनियम फॉस्फाइड की दो से तीन गोलियां (प्रत्येक 3 ग्रा.) प्रति टन बीज के हिसाब से 7 से 15 दिन के लिए प्रद्यूमित कर देते हैं। ऐसा प्रधूमन भंडार में रखने के तुरंत बाद करें। प्रद्यूमित कक्ष खोलने के बाद जब गैस बाहर निकल जाए तो उसी दिन या अगले दिन 40 मिली. मैलाथियान, 38 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन या 15 मि.ली. बाइफेंथ्रिन प्रति ली. पानी के हिसाब से मिलाकर बोरियों के ऊपर छिड़काव कर देना चाहिए। भंडारगृह को 15 दिन में एक बार अवश्य देखना चाहिए। बीज में कीट की उपस्थिति, फर्श व दीवारों पर जीवित कीट दिखाई देने पर आवश्यकतानुसार कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए। यदि कीट का प्रकोप शुरुआती है तो 40 मि.ली. डीडीवीपी प्रति ली. पानी के हिसाब से मिलाकर बोरियों के ऊपर एवं अन्य स्थान पर हर जगह छिड़काव करें। कीट नियंत्रण हो जाने के बाद हर पंद्रह दिन बाद ऊपर लिखे कीटनाशकों को अदल–बदल कर छिड़काव करते रहना चाहिए।

तैयार फसल को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक

कवक : कवक एक कोषिकीय बीजाणु है जिनमें जनन खुद ही होता है इसलिए इनके बीजाणुओं को पर्यावरण की पहुंच से दूर रखा जाना चाहिए ताकि ये भंडारित अनाज को संक्रमित ना कर सकें। भंडाारित अनाजों में कवक संक्रमण की अवस्था को पहचानना मुश्किल है। संक्रमण का फैलाव बीजाणुओं द्वारा होता है जो वातावरण में मौजूद हवा और कीटों द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलते हैं। दाने का कालापन और तीखी गंध, कवक संक्रमण के कुछ मुख्य लक्षण हैं जिससे अनाज की गुणवता, रंग और स्वाद प्रभावित होते हैं और खाने की वस्तुओं की पौष्टिकता में भी भारी कमी आती है। भंडारित स्थान पर उमस और नमी का होना कवक संक्रमण का प्रमुख कारण है। अनाज को कवक के संक्रमण से बचाने के लिए पूरी तरह सूखाकर भंडारण करना ही उचित माना जाता है।

कीट : भृंग और पंतग दो मुख्य प्रकार के कीट होते है जो भंडारित दालों और अनाजों को नुकसान पहुंचाते हैं। कीटों के जिंदा रहने के लिए आवश्यक वातावरण भंडारगृह में मौजूद होता है। दोनों के बच्चों को पहचानना बहुत ही मुश्किल होता है क्योंकि ये बहुत छोटे बीज के समान आकृति वाले होते हैं जोकि बीजों के अंदर रहकर नुकसान पहुंचाते हैं। टूटे हुए बीजों को भंडारित करने से कीटों को बुलावा मिलता है इसलिए कभी भी साबूत बीजों के साथ टूटे हुए बीजों को भंडारित न करें।

चूहे : भंडारित अनाज को नुकसान पहुंचाने में चूहे भी एक प्रमुख कारण है। चूहे जूट के बने हुए थैलों में आसानी से छेद करके बीजो को काफी नुकसान पहुंचा देते है जिससे खाद्य पदार्थ की गुणवत्ता में कमी आने से अनेक प्रकार की हानिकारक बीमारियां फैलती हैं। चूहों की रोकथाम पिंजरों का प्रयोग कर व रासायनिक उपचार, दोनों प्रकार से की जा सकती है परंतु पिंजरे का प्रयोग करना अधिक सार्थक माना जाता है।

तैयार अनाज को भंडारण से पहले अपनाएं यह तकनीक

धूप में सूखाकर : खेत से तैयार होकर खलिहान में आई फसल और फिर मड़ाई से निकले अनाज के भंडारण की बहुत आसान एवं टिकाऊ विधि है। लंबे समय से इसका प्रयोग अनाज में नमी, कीटों के प्रजनन में रोकथाम के लिए किया जाता रहा है। इस विधि में कटाई के बाद अनाज को धूप में सूखाकर लंबे समय के लिए उसे भंडारित कर देते हैं। इससे कीटों में होने वाली प्रजनन क्रिया रूक जाती है। यह विधि बड़े एवं छोटे, दोनों स्तर के किसानों के लिए बहुत लाभदायी व प्रभावी है। यह प्रक्रिया अप्रैल, मई व जून के महीने में करने से किसी भी प्रकार के कीड़ों और कीटों पर काबू पाया जा सकता है।

नीम की पत्तियों का इस्तेमाल कीडों एवं कीटों की रोकथाम के रूप में : नीम की पत्तियों का इस्तेमाल कीटों व कीड़ों को भंडारित अनाज से दूर भगाने के लिए किया जाता रहा है। इसके लिए पेड़ से ताजी पत्तियों को जमा कर उन्हें छाया में सुखाया जाता है। सीधे अनाज के साथ मिलाकर, अनाज की पेटी को बंद कर दिया जाता है। यह विधि बहुत ही सस्ती, सुरक्षित एवं प्रभावी है। रागी को भंडारित करने के लिए दक्षिणी भारतीय किसानों द्वारा नीम की पत्तियों का इस्तेमाल कर कीड़ों व कीटों से सुरक्षा के लिए किया जाता है।

हल्दी शोधन विधि अपनाएं

एक किलो अनाज में 40 ग्राम हल्दी के चूर्ण का भी उपयोग एक अच्छे विकल्प के रूप में किया जाता है। भंडारण से पहले अनाज को हल्दी के चूर्ण के साथ हल्के हाथ से रगड़ कर आधे घंटे के लिए धूप में सूखा देते हैं। कच्ची हल्दी का इस्तेमाल भी कीटों से सुरक्षा के लिए किया जाता है। इसकी तेज गंध एवं नाशी जीवरोधी गुण के कारण कीट अनाज से दूर रहते हैं। यह उपचार कीटों से लंबे समय तक सुरक्षा प्रदान करता है और खाने की दृष्टि से भी सुरक्षित है।

स्रोत–भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की ओर से समय–समय पर प्रस्तुत की गई रिपोर्ट
- *भारतीय दलहन अनुसंधान की ओर से जारी की गई रिपोर्ट।*
- *कृषि सेवा केंद्र की ओर से उपलब्ध कराई गई जानकारी।*
- *कृषि विज्ञान केंद्रों के वैज्ञानिकों से बातचीत।*

(लेखक पत्रकार हैं और विभिन्न समाचार–पत्रों में कृषि एवं समसामयिक विषयों पर नियमित लिखते रहते हैं।)
ई–मेल : chandrabhan0502@gmail.com

राष्ट्र कर बाजार
जीएसटी

COMMITTED TO TAXPAYER SERVICES

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी)

केन्द्र, 29 राज्यों और 2 केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा अपनाये जाने वाली प्रस्तावित एकल कर व्यवस्था।

जीएसटी के लाभ

- केन्द्र और राज्यों के विभिन्न करों की जगह केवल एक कर।
- कर पर कर लगने की समस्या का हल।
- कर की दरों और संरचना की समरुपता।
- करदाताओं के लिए कर के नियमों का अनुपालन आसान और अनुपालन खर्च भी कम।
- इनपुट टैक्स क्रेडिट के हस्तांतरण में कोई रुकावट नहीं।
- स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा।
- अधिक पारदर्शी कर प्रशासन।

निर्माता/आपूर्तिकर्त्ता से उपभोक्ता तक कई आरोपणों के स्थान पर एक कर।

मन की बात
के लिए अपने विचार और सुझाव दें
आपके विचार प्रधानमंत्री कर सकते हैं पूरे देश के साथ साझा!
अपनी राय Narendra Modi App पर साझा करें
1922 पर एक मिस्ड कॉल दें
या www.mygov.in पर लॉगइन करें
Google play /narendra modi | App Store /narendra modi
my GOV मेरी सरकार

davp 15502/13/0061/1617

कर का भुगतान, देश का निर्माण

करदाता सेवा महानिदेशालय
केन्द्रीय उत्पाद एवं सीमा शुल्क बोर्ड
www.cbec.gov.in

हमारे साथ जुड़ें : cbec_India

फसल विविधिकरण और पादप संरक्षण से बढ़ाए दलहन उत्पादन

—डॉ. वाई. एस. शिवे

उत्पादन एवं क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व में भारत का स्थान प्रथम है। भारतवर्ष में शाकाहारी मनुष्यों के लिए दालें या दलहन ही प्रोटीन का अभिन्न स्रोत है। मृदा की उत्पादन क्षमता को टिकाऊ बनाए रखने एवं बढ़ाने में भी दलहनी फसलों की भूमिका सर्वविदित है। रबी के मौसम में मुख्य रूप से चना, मसूर, मटर, राजमा इत्यादि की खेती उपयोगी है। धान एवं गेहूं की खेती की तुलना में दलहनी फसलें कम उपजाऊ या अनुपयुक्त जगहों पर उगाना आसान है, क्योंकि दलहनी फसलें अनाज वाली फसलों की तुलना में अधिक प्रतिरोधी होती हैं। फिर भी दलहनी फसलों की उत्पादकता अपनी आनुवांशिक क्षमता से बहुत कम है।

लगातार अनाज वाली फसलें जैसे धान–गेहूं, धान–धान लेने से मृदा पोषक तत्वों का अत्यधिक दोहन, भू–जल स्तर में गिरावट, पर्यावरण प्रदूषण, फसल–तंत्र उत्पादकता में कमी, कारक उत्पादकता में कमी, संसाधन प्रयोजन दक्षता में कमी, किसानों की आय में कमी इत्यादि समस्याएं बढ़ती जा रही हैं। इस प्रकार की समस्याओं से निजात पाने हेतु दलहन–आधारित फसल प्रणाली अपनाने की आवश्यकता है। फसल प्रणाली को टिकाऊ बनाने हेतु दलहनी फसलों को फसलचक्र में अपनाना नितांत आवश्यक एवं लाभदायी है। निम्नांकित फसल पद्धतियां टिकाऊ खेती में सहायक हैं–

चना आधारित फसल चक्र

खरीफ फसल की कटाई के बाद चने की बुवाई की जा सकती है। चने को फसलचक्र में अनाज वाली फसल के बाद लेने से कई मृदाजनित बीमारियों के नियंत्रण में मदद मिलती है।

खरीफ परती–चना; धान–चना; मक्का–चना;

बाजरा–चना; ज्वार–चना

इसके अलावा चने को अंतः फसल के रूप में गेहूं, जौ, सरसो, एवं अलसी के साथ भी उगाया जा सकता है। तराई क्षेत्रों में तोरिया के साथ भी अंतःफसल के रूप में ले सकते हैं।

मसूर–आधारित फसल चक्र

खरीफ परती – मसूर;

धान – मसूर

मक्का – मसूर;

बाजरा – मसूर

ज्वार – मसूर;

कपास – मसूर;

मूंगफली – मसूर

चने की तरह मसूर को भी सरसो, जौ, गेहूं, तोरिया इत्यादि के साथ अन्तः फसल के रूप में उगाया जा सकता है। इसके अलावा मसूर को शरदकालीन गन्ने के साथ भी

अन्तःफसल के रूप में उगाने से लाभ मिलता है। गन्ने की दो पंक्तियों के बीच 30 सेमी. की दूरी पर मसूर की दो पंक्ति उगाई जा सकती हैं।

मटर आधारित फसल चक्र

मक्का – मटर; धान – मटर;

कपास – मटर; ज्वार – मटर;

बाजरा – मटर

चने की तरह मटर को भी सरसो, जौ, गेहूं, जई, तोरिया इत्यादि के साथ अन्तःफसल के रूप में भी उगाया जा सकता है।

राजमायुक्त फसल चक्र

उत्तर भारतः बाजरा – राजमा; मक्का – राजमा

उर्द/मूंग/लोबिया – राजमा

पूर्वोत्तर भारतः धान – राजमा;

मक्का – राजमा

राजमा – धान–सरसो

जम्मू एवं कश्मीरः राजमा – सरसो/तोरिया

राजमा – गेहूं; राजमा – जई

इसके अतिरिक्त उत्तरी भारत में राजमा की खेती आलू, सरसो एवं अलसी के साथ अन्तः फसल के रूप में की जा सकती है। उत्तर भारत के ठंडे क्षेत्रों में राजमा की आलू के साथ 2:2 के अनुपात में अन्तःफसल सफलतापूर्वक की जा सकती है। जबकि मध्य भारत में राजमा की दो पंक्तियों के मध्य सरसो की एक पंक्ति अथवा राजमा की चार पंक्तियों के बाद सरसो की एक पंक्ति की अन्तः फसल की जाती है। कश्मीर क्षेत्र में मक्का एवं राजमा की 2:2 अनुपात में सफलतापूर्वक अन्तःफसल की जा सकती है।

फसल विविधता द्वारा ऊर्जा एवं नत्रजन मितव्ययिता

मृदा उर्वरता बढ़ाने एवं बनाए रखने में दलहनी फसलों का योगदान अतुलनीय है। दलहनी फसलें नत्रजन स्थिरीकरण, गहरी जड़ें, पत्तियों का झड़ना, अघुलनशील मृदा पोषक तत्वों की गतिशीलता बढ़ाना इत्यादि के लिए विशिष्ट हैं। दलहनी फसलें मृदा को भौतिक, रासायनिक एवं जैविक परिस्थिति को सुधारने में भी कारगर हैं। इसलिए दलहनी फसलें मृदा स्वास्थ्य को सुधारने, प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने एवं टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने में अर्थक्षम विकल्प है।

खरपतवार प्रबंधन

फसल उत्पादन में खरपतवार बहुत ही घातक एवं विरल जैविक बाधा है। खरपतवार फसल उत्पादकता घटाने के साथ ही उसकी गुणवत्ता में भी कमी लाता है। कृषिनाशक जीवों के द्वारा कुल नुकसान में लगभग 37 प्रतिशत योगदान खरपतवारों का है। खरपतवार से दलहन फसलों की पैदावार में औसतन 50–60 प्रतिशत तक की कमी देखी गई है, जोकि दलहन जाति एवं वंश तथा प्रबंधन प्रणालियों पर निर्भर है। इसी प्रकार प्रभावी खरपतवार नियंत्रण से रबी दलहन फसलों जैसे चना, मसूर, राजमा एवं मटर में 25 से 85 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि अर्जित की गई है।

सामान्यतः खरीफ ऋतु की तुलना में रबी की ऋतु में खरपतवार प्रकोप एवं नुकसान कम होता है। रबी दलहनी फसलों में बथुआ (चिनोपोडियम एल्बम), गेहुंसा (फेलेरिस माइनर), जंगली जई (एविना लूडोविसीयना) एवं मोथा (साइपेरस रोटण्डस) प्रमुख खरपतवार हैं।

खरपतवार प्रबंधन की विधियां

खरपतवार नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य अवांछनीय पौधों की वृद्धि को रोकना एवं लाभदायक या उपयोगी पौधों की वृद्धि को बढ़ाना है। अव्यवस्थित खरपतवार नियंत्रण के तरीके अपनाना हमारा उद्देश्य नहीं होना चाहिए। मुख्य खरपतवार प्रबंधन के निम्नांकित तरीके हैं–

- **खरपतवार रोकथाम –** खरपतवारों का प्रवेश एवं बढ़ने को रोकना, खरपतवार रोकथाम के लिए कारगर है। जैसे– खरपतवार मुक्त बीज की क्यारी बनाना, खाद को संदूषण–मुक्त रखना, अजोत क्षेत्र को साफ रखना, मशीन और औजारों को साफ रखना इत्यादि।
- **सस्य क्रियाएं –** इसमें कम लागत एवं पर्यावरण अनुकूल तरीके जैसे फसल पालन, फसलचक्र, उचित पौध आबादी, अन्तःफसल, संरक्षित जुताई इत्यादि तरीके अपनाए जा सकते हैं।
- **कृषि यांत्रिकी द्वारा खरपतवार प्रबंधन –** इस विधि में खरपतवारनाशी यंत्र उपलब्ध हैं जैसे हस्तचालित निराई उपकरण, खुरपी, हस्तचालित हो, कुदाली, ग्रबर निराई उपकरण, खूंटीनुमा शुष्क भूमि हेतु निराई उपकरण, एकल पहिया हो, जुड़वां पहिया हो, शक्तिचालित झाड़ूनुमा जुताई यंत्र इत्यादि।
- **खरपतवारनाशी द्वारा खरपतवार नियंत्रण –** हाथों द्वारा खेत से खरपतवार निकालना एक साधारण तरीका है, परंतु पिछले सालों से देखा गया है कि कृषि श्रमिकों की संख्या घटती जा रही है। इसकी कमी सबसे पहले पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, पश्चिमी उत्तर प्रदेश में देखी गई। इसकी वजह मनरेगा में मजदूरी अधिक एवं श्रम कम होना

भी है। अतः शाकनाशी या खरपतवारनाशी की मांग बढ़ती जा रही है। इसी क्रम में चना, मसूर, मटर एवं राजमा में निम्नांकित खरपतवारनाशी प्रयोग में लाए जा सकते हैं।

दलहनी फसलों के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

दलहनी फसलें रोगों द्वारा बुरी तरह प्रभावित होती हैं। उकठा, मूल विगलन, अंगमारी या झुलसा, गेरूई बोट्राइटिस, ग्रे मोल्ड इत्यादि दलहन के प्रमुख रोग हैं। दलहन की व्याधियों के लक्षण एवं उनका प्रबंधन, विस्तृत रूप से निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

रबी दलहन हेतु संस्तुत खरपतवारनाशी/शाकनाशी

खरपतवारनाशी	संस्तुत मात्रा संक्रिय तत्व (ग्राम/हे.)	उत्पाद (ग्राम या मि.ली./हे.)	प्रयोग का समय	विशेष
पेन्डिमेथालिन	750–1000	2500–3000	बुवाई के तद्पश्चात से अंकुरण पूर्व	अधिकतर एकवर्षीय घास को कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार भी मारते हैं।
फ्लूक्लोरेलिन	750–1000	1500–2000	बुवाई पूर्व	सतह की मिट्टी में अच्छी तरह मिलाए। कई तरह की एकवर्षीय संकरी पत्ती एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रण करता है।
मेटालाक्लोर	1000–2000	2000–3000	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पहले	कई तरह की वार्षिक चौड़ी एवं संकरी पत्ती वाले खरपतवार नियंत्रण करता है।
कुजालोफॉप ईथाइल	50–100	1000–2000	बुवाई के 15–20 दिन के मध्य	एकवर्षीय घासों को मारने हेतु कारगर है।
मेट्रीब्यूजिन	250	350	अंकुरण पूर्व या बुवाई के 15–20 दिन के मध्य	एकवर्षीय चौड़ी एवं संकरी पत्ती वाले खरपतवार को नियंत्रित करता है। कुछ सेज को भी मारता है।
ऑक्सीफ्लूरफेन (मटर के लिए	100–125	400–500	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व	ज्यादातर खरपतवार मारने हेतु उपयुक्त है।
मेन्डिमेथालिन (अंकुरण–पूर्व) + कुजालोफॉप ईथाइल (अंकुरण पश्चात)	1250+100	4170+2000	बुवाई पश्चात एवं अंकुरण पूर्व तथा बुवा. ई से 20–25 दिन के मध्य	ज्यादातर खरपतवार नियंत्रण करने हेतु उपयुक्त है।

उकठा या उखेड़ा रोग

यह चने का प्रमुख रोग है। उकठा रोग का प्रमुख कारक फ्यूजेरियम, आक्सीस्पोरम प्रजाति साइसेरी नामक फफूंद है। यह सामान्यतः मृदा एवं बीजजनित बीमारी है, जिसकी वजह से 10–12 प्रतिशत तक पैदावार में कमी आती है। पौधे के जीवनकाल में कभी भी ग्रसित कर सकती है। यह फफूंद बगैर पोषक या नियंत्रक के भी मृदा में लगभग छः वर्षों तक जीवित रह सकती है। वैसे तो यह रोग सभी क्षेत्रों में फैल सकता है परंतु जहां ठंड अधिक एवं लम्बे समय तक पड़ती है, वहां पर कम होता है। यह रोग पर्याप्त मृदा नमी होने पर एवं तापमान 25–30 डिग्री सेल्सियस होने पर तीव्र गति से फैलती है। इस बीमारी के प्रमुख लक्षण निम्नांकित हैं–

- रोगग्रसित पौधे के ऊपरी हिस्से की पत्तियां एवं डंठल (पिटियॉल) झुक जाते हैं।
- पौध सूखना शुरू कर देती है एवं मरने के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। सूखने के बाद पत्तियों का रंग भूरा तने जैसा हो जाता है।
- जवान एवं अंकुरित पौधे कम उम्र में ही मर जाते हैं तथा भूमि की सतह वाले क्षेत्र में आंतरिक ऊतक भूरे या रंगहीन हो जाते हैं।
- यदि तने को लम्बवत् चीरा लगाएंगे तो तम्बाकू के रंग की तरह धारा दिखाई पड़ती है। परंतु, यह पतली एवं लंबी धारी तने के ऊपर दिखाई नहीं देती है।

प्रबंधन

- बुवाई का उचित समय अक्टूबर से नवंबर का प्रथम सप्ताह।
- गर्मियों (मई–जून) में गहरी जुताई करने से फ्यूजेरियम फफूंद का संवर्धन कम हो जाता है। मृदा का सौर उपचार करने से भी रोग में कमी आती है।
- 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से कम्पोस्ट का प्रयोग करें।

निम्नांकित फफूंदनाशी द्वारा उपचार करें

एक ग्राम कार्बेन्डाजिम (बाविस्टीन) या कार्बेक्सिन या 2 ग्राम थीरम एवं 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा विरिडी प्रति किग्रा. बीज के हिसाब से बीजोपचार करें। इसी प्रकार 1.5 ग्राम बेंलेट टी (30 प्रतिशत बेनोमिल एवं 30 प्रतिशत थीरम) प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करने पर मृदाजनित रोगाणुओं को मारने में लाभप्रद हैं।

उकठा रोग प्रतिरोधी किस्में उगाएं

चना– डी.सी.पी. 92–93, हरियाणा चना–1, पूसा 372, पूसा चमत्कार (काबुली), जी.एन.जी. 663, के.डब्ल्यू.आर. 108, जे.जी. 315, जे.जी. 16 (साकी 9516), जे.जी. 74, ज्वाहर ग्राम काबुली 1 (जे.जी.के. 1, काबुली), विजय, आई.सी.सी.वी. 10, आई.सी.सी. वी. 32, (काबुली), फूले जी 95311 (काबुली)

मसूर – पंत एल 401, पंत एल 639।

- उकठा का प्रकोप कम करने हेतु तीन साल का फसल चक्र अपनाएं। मतलब तीन साल तक चना नहीं उगाए।
- सरसो या अलसी के साथ चने की अंतःफसल लें।

अंगमारी या झुलसा : यह व्याधि एस्कोकाइटा रेशि नामक फफूंद द्वारा फैलती है। यह बीमारी आंतरिक एवं बाह्य बीजजनक है। इसका रोगाणु 25–30 डिग्री सेल्सियस तापमान पर फसल अवशेष एवं बीज की सतह पर पांच माह तक जीवित रह सकता है। यह फफूंद भारत के उत्तर–पश्चिम क्षेत्र जहां पर आर्द्रता अधिक एवं तापमान कम हो, वहां पर पादप वृद्धि के दौरान अधिक फैलती है। सामान्यतः बीमारी के लक्षण फूल आने एवं कलियां बनते समय पर दिखाई देते हैं। इस बीमारी के लक्षण हैं–

सुबह–सुबह खेत में देखने पर कहीं–कहीं टुकड़ों में पौधे पीले नजर आते हैं। पौधे के तने, पत्तियों एवं फलियों पर भूरे रंग के गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं। इन धब्बों पर गोलाकार जख्मों में पिक्निडिया पाए जाते हैं। ये धब्बे सामान्यतः छल्लेनुमा होते हैं जिनके किनारे गहरे भूरे रंग के एवं केंद्र स्लेटी या धूसर रंग का होता है। इन धब्बों में पिक्निडिया होता है, जिनका आकार 3–5 सेमी. तक होता है। कभी–कभी ये धब्बे बीज पर भी देखे जा सकते हैं।

प्रबंधन

- रोगरोधी किस्में उगाना सर्वाधिक कारगर तरीका हैं। जैसे– जी.एन.जी. 469 (सम्राट), पी.बी.जी. 1, पी.बी.जी. 5 (जी.एल. 88341), पूसा 372 इत्यादि चने की किस्में उगाएं।
- संस्तुत फफूंदनाशक द्वारा बीजोपचार करें। जैसे– थीरम, बेनोमिल, केलिक्सिन–एम, थायोबेंडाजोल, बाविस्टीन–थीरम (1:1), हेक्जाकाप, केप्टाफ इत्यादि फफूंदनाशी द्वारा 3 ग्राम प्रति किलो बीज या शेवरल द्वारा 3 ग्राम प्रति किग्रा. बीज के हिसाब से बीजोपचार करना प्रभावशाली रहता है।
- रोग का द्वितीयक फैलाव रोकने हेतु हेक्जाकाप, केप्टाफ, इन्डोफिल एम–45 या कवच का 3.5 ग्राम प्रति एकड़ में 100 लीटर पानी में मिलाकर 2–3 बार छिड़काव करें।
- कुछ सस्य क्रियाएं जैसे देरी से बुवाई, अधिक कतार से कतार एवं पौधे से पौधे की दूरी, गेहूं, जौ के साथ अन्तःफसल लेने इत्यादि से बीमारी का प्रकोप कम होता है। इसी प्रकार, गेहूं, जौ, राई, सरसो इत्यादि द्वारा फसलचक्र अपनाने पर भी रोग का प्रभाव कम होता है।
- गुणवत्तायुक्त, रोगमुक्त बीज ही खरीदें एवं बोएं।

चूर्णी फफूंद रोग

- यह रोग इरीसीफी पोलीगोनी नामक फफूंद द्वारा फैलता है। यह मुख्य रूप से मटर की बीमारी है एवं मटर उगाने वाले क्षेत्रों में यह व्यापक–स्तर पर फैलती है। इसके लक्षण हैं–
- पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसी रचना दिखाई देती है परंतु, धीरे–धीरे इसके माइसिलियम एवं बीजाणु (स्पोर) पत्तियों की दोनों सतह तथा अन्य पर्णीय भागों जैसे–पर्ण तंतुओं, तना, फलियों आदि पर श्वेत चूर्ण जैसे धब्बे विकसित हो जाते हैं। बाद में पर्णीय भागों पर सफेद चूर्ण की परत–सी चढ़ जाती है तथा संक्रमित भाग स्लेटी अथवा भूरा हो जाता है।

प्रबंधन

- रचना, पंत मटर 5, डी.एम.आर. 7, एच.यू.पी. 2, अपर्णा, शिखा, जे.जी. 885, एच.एफ.पी. 8909, सपना, स्वाती, मालवीय मटर 2, मालवीय मटर 15, के.पी.एम.आर. 400, के.पी.एम.आर. 522, इत्यादि रोगरोधी किस्में उगाएं।
- रोग के अधिक संभावित क्षेत्रों में कम अवधि में शीघ्र पकने वाली प्रजातियां ही उगाएं।
- घुलनशील गंधक (70 घुलनशील पाउडर सल्फेस) (0.3 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत) अथवा कैराथेन (0.05 प्रतिशत) के 2–3 छिड़काव 10–15 दिन के अंतराल पर करें।

बीन कॉमन मोजेक विषाणु रोग

यह राजमा की फसल मे होने वाली विषाणुजनित व्याधि है। इस रोग का प्रकोप बीज या माहू द्वारा फैलता है। इसके लक्षण निम्नांकित हैं–

- पौधे की संक्रमित पत्तियों पर हल्के रंग के धब्बे पड़ जाते हैं जिससे पत्तियां विरूपित हो जाती हैं।
- कभी–कभी पत्तियों में ऐंठन जैसे लक्षण प्रकट होते हैं। संक्रमित पौधे की वृद्धि रूक जाती है एवं पौधा बौना रह जाता है।
- कुछ क्षेत्रों में राजमा की फसल में झुर्रीदार मौजेक का भी प्रकोप होता है। परिणामस्वरूप संक्रमित पत्तियों की नोंक तथा किनारे नीचे की तरफ झुक जाते हैं।
- संक्रमित पौधे में फलियां कम बनती है तथा ग्रसित पौधे की फलियां स्वस्थ पौधे की अपेक्षाकृत देर से पकती हैं। रोगग्रसित पौधे की फलियों में दाने छोटे तथा विरूपित रह जाते हैं।

प्रबंधन

- विषाणुरहित प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।
- वाहक कीटों के नियंत्रण हेतु मेटासिस्टॉक्स 0.2 प्रतिशत या रोगोर 0.2 प्रतिशत या मेलाथियान 0.3 प्रतिशत छिड़काव करें।
- रोगरोधी प्रजाति 'अम्बर' उगाएं।

दलहन के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

चना फली भेदक

हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा (हुबनर) एक बहुभक्षी कीट है, जो सामान्यतः चना फली भेदक नाम से जाना है। सम्पूर्ण भारत में चने की फसल पर लगने वाला यह प्रमुख कीट है। यह कीट 181 प्रकार की फसलों एवं 48 प्रकार के खरपतवार को खा सकता है। इसका प्रकोप पत्तियों व पुष्पों की अपेक्षा फलियों पर सर्वाधिक होता है। इस कीट की छोटी सूंडी फसल की कोमल पत्तियों को खुरच–खुरच कर खाती है एवं द्वितीयक सूंडी सम्पूर्ण पत्तियां, कलियों एवं पुष्पों को खाती है, जबकि तृतीयक अवस्था की सूंडी चने की फली में गोलाकार छिद्र बनाकर मुंह अंदर घुसकर दाने को खा जाती है। एक व्यस्क सूंडी 7–16 फलियों को क्षतिग्रस्त कर सकती है।

प्रबंधन

- लिंग फिरोमोन ट्रेप द्वारा कीट आबादी के फैलाव या व्यापकता की निगरानी की जा सकती है। फिरोमोन ट्रेप विपरीत लिंग के कीटों को आकर्षित करता है। यदि एक रात में मादा मोथ की संख्या 4–5 तक ट्रेप में चिपक जाती है, तो उपयुक्त रोकथाम के उपचार अपनाना चाहिए।
- गर्मियों में गहरी जुताई करने से कीट के प्यूपा मर जाते हैं।
- समय पर बुवाई करने एवं जल्दी पकने वाली किस्में उगाने से कीट के प्रकोप से बचा जा सकता है।
- अवरोधी किस्में जैसे– जे.जी. 130, जे.जी. 322, जे.जी. 11, जे.जी. 74, आई.पी.सी. 97–67 (एस.पी.एस. 3), आर.एस.जी. 888 इत्यादि उगाएं।
- नीम बीज गुठली सत्व का 5 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करें।
- मोनोक्रोटोफॉस (0.04 प्रतिशत), फेनवलरेट (0.01 प्रतिशत) एवं क्लोरपाइरीफॉस का छिड़काव करें। यदि तरल निरूपण उपलब्ध नहीं हो तो फेनवलरेट (0.5 प्रतिशत), मिथाइल पैराथियान (2 प्रतिशत) चूर्ण का 20–25 किग्रा/हे. की दर से भुरकाव करें।

माहू

मसूर की फसल को दो प्रकार के माहू प्रभावित करते हैं। एक जो 2 मि.मी. लम्बा, कोमल तथा चमकदार काले रंग का तथा दूसरा 3–4 मि.मी. लम्बा, हरा तथा हरे रंग के पैर वाला होता है। मटर एवं राजमा की फसल को भी माहू नुकसान पहुंचाता है। माहू पौधे के फ्लोएम से रस चूसकर अपना समूह बनाता है एवं पौधे का आकार विकृत कर देता है। तत्पश्चात अनेक विषाणुजनित रोगों का संचारण करते हैं। माहू पौधे के कोमल तनों, पत्तियों की निचली सतह, पुष्पों, कलियों तथा फलियों को रस चूसकर विभिन्न कोमलांगों को क्षति पहुंचाता है। कीटों से प्रभावित पौधे छोटे, पत्तियां पीली, फलियां छोटी

एवं बीज अविकसित रह जाते हैं। बादलों द्वारा आच्छादित वातावरण एवं तेज हवा चलने पर माहू का प्रकोप अधिक हो जाता है। मटर एवं राजमा में उत्पन्न होने वाले विषाणुओं की वाहक होने के कारण इस कीट का आर्थिक महत्व और बढ़ जाता है।

प्रबंधन

- मोनोक्रोटोफॉस (8–10 मिली./किग्रा. बीज) या क्लोरपाइरीफॉस (1.0 लीटर/कुंतल बीज) द्वारा बीजोपचार करने पर प्रारंभिक अवस्था में फसल को नुकसान कम होता है।
- खड़ी फसल में जड़ों के पास क्लोरपाइरीफॉस (0.05 प्रतिशत घोल) या डाइमेथोएट (0.3 प्रतिशत घोल) का छिड़काव करें।
- सोनपंखी भृग (लेडी बर्ड बीटल) एवं लेसविंग नामक प्राकृतिक शत्रुओं द्वारा जैविक नियंत्रण करें।
- एबामेक्टिन, एसिटामिप्रिड, डाइनोफ्येरान इमिडाक्लोप्रिड, पाइरीप्रोक्सिफेन, थाएमेथोक्साम इत्यादि की संस्तुत मात्रा का छिड़काव लाभदायक है।

दलहन में सूत्रकृमि प्रबंधन

दलहनी फसलों को सामान्यतः जड़ग्रंथि सूत्रकृमि (मेलोइडोगाइनी जावानिका, मे. इनकोग्निटा), मूल जख्म सूत्रकृमि (प्रेटिलेंक्स थोर्नी), रेनीफॉर्म (रोटिलेन्कुलस रेनिफॉर्मिस), पुट्टी (सिस्ट) सूत्रकृमि (हेट्रोडेरा स्वरूपी एवं हेट्रोडेरा केजीनी) इत्यादि सूत्रकृमि मुख्य रूप से प्रभावित करते हैं।

सूत्रकृमि या गोलकृमि धागे के आकार के रंगहीन कीड़े होते हैं, जिनको खुली आंखों से देखना मुश्किल होता है। ये छोटे, पतले, खंडरहित धागे के सदृश्य द्विलिंगी होते हैं। ये मृदा के भीतर 15–30 सेमी. की गहराई में पाए जाते हैं, जहां पर पौधों की जड़ें होती हैं। सूत्रकृमि प्रायः जड़ ऊतकों के कार्य में बाधा डालते हैं। फलस्वरूप जड़ द्वारा पोषण एवं जल का अवशोषण अवरुद्ध हो जाता है। इसी कारण प्रभावित पौधे के वायवीय भागों में पोषक तत्वों एवं जल की कमी एवं लवणता की प्रचुरता बढ़ जाती है। इसकी वजह से पौधों की वृद्धि रूक जाती है, पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, तथा शाखाएं कम निकलती हैं। अधिक प्रकोप होने पर फूल, फली एवं दाने बनना पूरी तरह से प्रभावित होता है। सूत्रकृमि पौधे के भूमिगत भागों में पाए जाने की वजह से जड़ों में गांठे बनना, जड़ों में अत्यधिक शाखाएं निकलना, जड़ की ऊपरी परत का छिलका उतरना, पत्तियों पर उभार उत्पन्न होने जैसे लक्षण दिखाई देते हैं।

सूत्रकृमि नियंत्रण के उपाय

- ग्रीष्म ऋतु में खेत की गहरी जुताई करें।
- गेहूं व जौ इत्यादि गैर–पोषक फसलों को फसलचक्र में अपनाएं। मक्का, बाजरा, ज्वार इत्यादि को भी फसल अनुक्रम में ले।
- चना, मसूर, राजमा, मटर के साथ सरसो या तोरिया की अन्तःफसल ले।
- कार्बोसल्फान, कार्बोफ्यूरान, फेनोफॉस, एल्डीकार्ब, बंडीकार्ब, डायाजिनॉन, ट्राइजोफास इत्यादि द्वारा 1–3 प्रतिशत सक्रिय तत्व द्वारा बीजोपचार करने से जड़ग्रंथि सूत्रकृमि, लेजन सूत्रकृमि एवं अन्य सूत्रकृमि से बचाव किया जा सकता है।
- सूत्रकृमि अवरोधी प्रजातियों का चयन करें।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के सस्य विज्ञान संभाग में प्रधान वैज्ञानिक हैं।)
ई–मेल : ysshivay@hotmail.com

आगामी अंक

दिसंबर, 2016 – गांवों में बुनियादी ढांचा

स्वास्थ्य-चर्चा

पौष्टिकता और औषधीय गुणों का खजाना

दलहन और तिलहन

—निमिष कपूर

पारंपरिक भारतीय भोजन में दाल और तेल हमारा ज़ायका बढ़ाते हैं और इनके उचित एवं जागरूक प्रयोग से हमें स्वास्थ्य लाभ भी होता है। दलहन और तिलहन में नायाब औषधीय गुण हैं जिन्हें जानकर और अपनाकर आप अपने स्वास्थ्य को और बेहतर बना सकते हैं। आज जरूरी है कि हम अपने प्राकृतिक संसाधनों के प्रति सजग हो और प्रकृति-प्रदत्त पोषकता और औषधीय गुणों से भरपूर दलहन और तिलहन का समुचित प्रयोग अपने अच्छे स्वास्थ्य के लिए करें।

दलहन और तिलहन यानी दालें और तेल प्रदान करने वाली फसलें सदियों से भारतीय खानपान का अभिन्न हिस्सा रही है। न जाने कितने भारतीय व्यंजन, मिठाइयां और नमकीन दालों पर आधारित हैं जो भारतीय खाने की अंतर्राष्ट्रीय पहचान बन चुके हैं। क्या आप जानना चाहेंगे कि दालों में इतने औषधीय गुणों का खजाना छिपा है जो इंसान के अनेक रोगों से लड़ने में मददगार है। कम वसा और उच्च रेशे से युक्त दालें प्रोटीन का एक बड़ा स्रोत तो हैं ही, इसके साथ ही दालों में विटामिन, कार्बोहाइड्रेट, फॉस्फोरस, कैल्शियम, लौह और लायसिन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व और खनिज पाए जाते हैं जो स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं। मांसाहारियों को शरीर के लिए आवश्यक प्रोटीन और पोषक तत्व मांस से मिल जाते हैं, लेकिन शाकाहारियों के लिए पोषक तत्वों का सबसे बड़ा खजाना दालों में ही मौजूद होता है। इसमें मौजूद अमिनो एसिड से बहुत अधिक मात्रा में प्रोटीन मिलता है, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत लाभदायक होता है। मुख्य रूप से उगाई जानी वाली दलहनी फसलों में चना, अरहर, उड़द, मूंग, लोबिया, राजमा आदि हैं। औषधीय गुणों से भरपूर तिलहनी फसलों में मुख्य रूप से तिल, मूंगफली, सूरजमुखी, अरंडी, अलसी, सरसो और सोयाबीन आदि आते हैं।

शाकाहारी भोजन में दलहनी फसलों का महत्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न दालों में प्रोटीन की मात्रा 22 से 26 प्रतिशत तक पाई जाती है जो किसी अन्य शाकाहार में नहीं होती। एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए प्रतिदिन 50 से 56 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। प्रोटीन शरीर का निर्माण करने वाले तत्वों में सबसे महत्वपूर्ण है। इससे मांसपेशियां मजबूत होती हैं, कोशिकाओं और ऊतकों की मरम्मत होती है और शरीर का संतुलन बेहतर होता है। प्रोटीन शरीर की सभी कोशिकाओं, कोशिकाओं के समूह (ऊतक), मांसपेशियों और अंगों में पाया जाता है, जोकि इन सभी भागों को पोषण पहुंचाता है। प्रोटीन में अमीनो एसिड होते हैं,

जोकि शरीर की निर्माण इकाई हैं और ये अमीनो एसिड शरीर में प्रोटीन के उपयोग को निर्धारित करते हैं। अमीनो एसिड शरीर में भंडारित नहीं होते, इसलिए हमें बेहतर स्वास्थ्य के लिए रोज़ाना अच्छे प्रोटीन युक्त भोजन की सलाह दी जाती है।

चिकित्सक दाल को हृदय के लिए अच्छा मानते हैं। दाल में बहुत ज्यादा फाइबर होता है जोकि हृदय रोग को पैदा होने से रोकता है। इसके अलावा इसमें हाई लेवल का मैग्नीशियम और फोलेट भी पाया जाता है, जिससे शरीर को रक्त संचार, पोषण और ऑक्सीजन प्राप्त होता रहता है। कोलेस्ट्रॉल घटाने में मददगार दालों में घुलनशील रेशे पाए जाते हैं, जोकि ब्लीड कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करते हैं। कोलेस्ट्रॉल स्तर को नियंत्रित करके दिल की बीमारी से बचा जा सकता है। दालों में पाए जाने वाले घुलनशील रेशे पाचन क्रिया को संतुलित करके रक्त शर्करा (मधुमेह) को स्थिर करने में मदद करते हैं। पाचन स्वास्थ्य में सुधार के लिए दाल के घुलनशील रेशे कब्ज की बीमारी और पाचन समस्याओं को ख़त्म करते हैं। दाल में आयरन की अधिक मात्रा एनिमिया रोग के निदान में सहायक है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में दाल से प्राप्त प्रोटीन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अनेक दालें मिट्टी में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करके मृदा उर्वरता बढ़ाने में खास भूमिका निभाती हैं। इनसे मिट्टी में ऐसे सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होती है जो फसल की उपज को बढ़ाने में सहायक होते हैं।

पौष्टिकता और प्रोटीन से भरपूर दलहन

भारत में अरहर या तूर दाल की खेती तीन हजार वर्ष पूर्व से होती आ रही है। अरहर भारत में प्रमुखता से खायी जाती है। विलक्षण गुणों से सम्पन्न अरहर की दाल से शरीर को कई महत्वपूर्ण पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, आयरन, फोलिक एसिड, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम और विटामिन बी आदि प्राप्त होते हैं। कॉलेस्ट्रॉल से मुक्त अरहर की दाल प्रोटीन और फाइबर का बहुत बड़ा स्रोत है। शोध के अनुसार अरहर दाल में मौजूद फोलिक एसिड खासतौर पर गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। शोधकर्ताओं के मुताबिक, भरपूर मात्रा में फोलिक एसिड लेने से दिमाग और रीढ़ की हड्डियों संबंधित बीमारियों से बचा जा सकता है। अरहर की दाल कार्बोहाइड्रेट् का अच्छा स्रोत है जिससे शरीर को ऊर्जा प्राप्त होती है। कार्बोहाइड्रेट युक्त खाद्य पदार्थ शरीर में ग्लूकोज में तब्दील हो जाता है और शरीर, दिमाग और तंत्रिका–तंत्र को ऊर्जान्वित रखता है। अरहर के फाइबर कब्ज, हृदय रोग, स्ट्रोक, कैंसर, कार्डियोवस्कुलर रोग और टाइप–टू मधुमेह से बचाते हैं। अरहर दाल पित्त, कफ़ और खून सम्बन्धी विकारों से भी दूर रखती है।

मूंग दाल मूंग साबुत, मूंग छिलका और मूंग धुली के रूपों में प्रयोग में आती है। दालों में सबसे पौष्टिक दाल का दर्जा मूंग को प्राप्त है। मूंग दाल प्रोटीन का एक उच्च स्रोत है जो फाइबर, एंटीऑक्सीडेंट और फ़ायटोन्यूट्रीएंट (पौधों से प्राप्त पोषक तत्व) से युक्त होती है। भारत में मूंग 1500 ई.पू. से पारम्परिक औषधि के रूप में प्रयुक्त होती आई है। मूंग की दाल में ऐसे गुण होते हैं जो शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं और उसे बीमारियों से लड़ने की ताकत देते हैं। मूंग में विटामिन ए, बी, सी, ई और पोषक तत्व पोटेशियम, मैग्नीशियम, फोस्फोरस, आयरन, कैल्शियम अच्छी मात्रा में पाए जाते हैं। आहार विशेषज्ञ कैलोरी के नियंत्रण में मूंग के सेवन की सलाह देते हैं क्योंकि यह अल्प–कोलेस्ट्रोल और अल्प–सोडियम युक्त होती है। अन्य दालों की अपेक्षा मूंग दाल आसानी से पच जाती है। इसमें मौजूद फाइबर शरीर के खराब कोलेस्ट्रॉल को कम करते हैं। गर्भवती महिलाओं को भी मूंग दाल के सेवन की सलाह दी जाती है।

अंकुरित मूंग की खूबियों से भी परिचित होने की आवश्यकता है। अंकुरित मूंग वास्तव में मूंग का शिशु पौधा है। आकार में छोटा होने के कारण इस पौधे में मुख्य विटामिन और पोषक तत्वों की भरमार रहती है जिसमें आयरन, पोटेशियम, फोलेट और विटामिन सी पाया जाता है। अंकुरित मूंग प्रोटीन का एक उत्तम स्रोत है। मूंग में अंकुरण के बाद एंजाइम उत्पन्न होते हैं जो इसके प्रोटीन के पाचन में मदद करते हैं। अंकुरित मूंग में ग्लूकोज स्तर बहुत कम होने से मधुमेह रोगी इसे खा सकते हैं। 28 ग्राम अंकुरित मूंग में लगभग 7 ग्राम प्रोटीन प्राप्त होता है जो एक उबले अंडे के बराबर होता है। अपने उच्च पोषक गुणों के कारण अंकुरित मूंग अनेक जटिल रोगों, आयु सम्बंधित रोगों जैसे हृदय रोग, कैंसर, मधुमेह और मोटापे में कारगर है। अंकुरित मूंग में शरीर के विषाक्त तत्व को बाहर निकालने के गुण होते हैं और इसके नियमित सेवन से पाचन क्रिया दुरुस्त बनी रहती है जिसके कारण पेट संबंधी समस्याएं नहीं होती। हम कह सकते हैं कि अंकुरित मूंग में खुशहाल जीवन का राज़ छिपा है।

उड़द दाल का सेवन उड़द साबुत, उड़द छिलका और धुली उड़द के रूप में होता है। आयुर्वेद के अनुसार इसकी दाल पौष्टिक और बलकारक होती है। उड़द में स्टार्च, आयरन, तेल और फास्फोरिक एसिड पाए जाते हैं। इसकी तासीर ठंडी होती है, अतः यह सलाह दी जाती है कि इसका सेवन करते समय शुद्ध घी में हींग का तड़का अवश्य लगा लेना चाहिए। उड़द में कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, कैल्शियम व प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। उड़द में उच्च मात्रा में आयरन होता है, जिसे खाने से शरीर को बल मिलता है। इसमें रेड मीट के मुकाबले कई गुना अधिक आयरन होता है। जिन लोगों की पाचन शक्ति प्रबल होती

है, वे यदि इसका सेवन करें, तो उनके शरीर में रक्त, बोनमैरो की वृद्धि होती है। इसमें बहुत सारे घुलनशील रेशे होते हैं, जो पाचन में मदद करते हैं। कोलेस्ट्रॉल घटाने के अलावा भी काली उड़द स्वास्थ्यवर्धक होती है. यह दिल को स्वस्थ भी रखती है, क्योंकि इससे रक्त संचार बढ़ता है और हृदय धमनियों को अवरोध से बचाती है। बवासीर, गठिया, दमा और लकवा के रोगियों को इसका सेवन कम करने की सलाह दी जाती है।

दुनिया भर के वैज्ञानिक शोधों में चने को उच्च कोटि का आहार माना गया है। चना दो प्रकारों – काले चने और काबुली चने के रूप में उगाया जाता है। चने में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, नमी, चिकनाई, रेशे, कैल्शियम, मैग्नेशियम, आयरन व विटामिन ए, सी, बी6, बी12, डी आदि समुचित मात्रा में पाए जाते हैं। आयुर्वेद एवं प्राकृतिक चिकित्सा में चने के अनेक लाभ बताए गए हैं। काला चना मोटापे को कम करने में कारगर माना गया है। चना पाचन शक्ति को संतुलित रखता है और दिमागी शक्ति को बढ़ाता है। चने खाने से रक्त साफ होता है जिससे त्वचा निखरती है। रात में सोते समय भुने हुए चने चबाकर फिर गर्म दूध पीने से श्वास रोग व कफ दूर होता है। काले चने रात में भिगोकर सुबह खाली पेट सेवन करने से डायबिटीज में लाभ मिलता है। जौ व चने की समान मात्रा में रोटी खाने से मधुमेह में फायदा होता है।

मसूर दाल तीन प्रकार की होती है–साबुत, धुली और छिली हुई। मसूर में कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन, सोडियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम, आयोडीन, एल्युमीनियम, कॉपर, जिंक, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं विटामिन डी आदि तत्व पाए जाते हैं। मसूर दाल के सेवन से रक्त की वृद्धि होती है और दुर्बलता ख़त्म होती है। कमजोरी या खून की कमी होने पर मसूर की दाल में एक चम्मच गाय का घी मिलाकर खाने की सलाह दी जाती है। मसूर पाचन क्रिया ठीक कर पेट के रोग दूर करती है।

लोबिया की दाल बहुत ही स्वादिष्ट और पोषक तत्वों से भरपूर होती है। बढ़ते बच्चों के लिए लोभिया अधिक लाभदायक होता है। लोबिया प्रोटीन के साथ ही पोटेशियम का भी बहुत अच्छा स्रोत है। साथ ही इसमें मैग्नीशियम, कॉपर के साथ फाइबर की सबसे ज्यादा मात्रा पाई जाती है। इसमें विटामिन ए, बी12, डी और कैल्शियम भी होता है। लोबिया शरीर के ख़राब कोलेस्ट्रोल को कम करता है। साथ ही इसमें मौजूद प्रोटीन और फाइबर पाचन क्रिया को बेहतर बनाता है। लोबिया में मौजूद काले रंग का भाग एंटी–ऑक्सीडेंट का काम करता है जो शरीर को कैंसर जैसी बीमारियों से बचाता है। लोबिया दाल का सेवन वजन कम करने में भी सहायक होता है। इसके फाइबर और फ्लेवोनॉयड्स की मात्रा से मधुमेह रोग में आराम मिलता है।

दलहन के पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम मात्र में)

	ऊर्जा (किलो कैलोरी)	नमी (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	खनिज (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	रेशा (ग्राम)	कैल्शियम (ग्राम)	फास्फोरस (ग्राम)	आयरन (ग्राम)
चना	360	10	17	5	3	61	4	202	312	5
चना दाल	372	10	21	6	3	60	1	56	331	5
भुना चना	369	11	22	5	2	58	1	58	340	9
उड़द दाल	347	11	24	1	3	60	1	154	385	4
लोबिया	323	13	24	1	3	54	3	77	414	9
बाकला फली	347	10	25	1	3	60	1	60	433	3
साबुत मूंग	334	10	24	1	3	57	4	124	326	4
मूंग दाल	348	10	24	1	3	60	1	75	405	4
कुल्थी	321	12	22	0	3	57	5	287	311	7
मसूर	343	12	25	1	2	59	1	69	293	7
मोठ की दाल	330	11	24	1	3	56	4	202	230	9
हरे मटर	93	73	7	0	1	16	4	20	139	1
सूखे मटर	315	16	20	1	2	56	4	75	298	7
मटर (भुने हुए)	340	10	23	1	2	57	4	81	345	6
राजमा	346	12	23	1	3	61	5	260	410	5
अरहर दाल	335	13	22	2	3	58	1	73	304	2
सोयाबीन	432	8	43	20	5	21	4	240	690	10

दलहन: एक टिकाऊ भविष्य हेतु पौष्टिक बीज

विश्व भर में दालें इंसानों के लिए शाकाहारी प्रोटीन एवं एमिनो एसिड के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। साथ ही जानवरों के लिए चारे के रूप में पादप आधारित प्रोटीन का स्रोत भी हैं। दालें खाद्य सुरक्षा और पोषण के उद्देश्य की पूर्ति हेतु स्थायी खाद्य उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। दालें फलीदार (लेग्यूमिनस) पौधे हैं जिन्हें वनस्पति जगत के महत्वपूर्ण कुल लेग्यूमिनेसी के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है। लेग्यूम या फलीदार फसलें जिनके सूखे दानों को उपयोग किया जाता है, दलहनी फसलें कहलाती हैं। इन फसलों में उपलब्ध प्रोटीन पोषक तत्व, आवश्यक अमीनो अम्ल, विटामिन तथा मिनरल्स के कारण इन्हें प्रोटीन टेबलेट्स, प्रकृति का अनमोल उपहार आदि विश्लेषणों से अलंकृत किया जाता है। विश्व भर के स्वास्थ्य संगठन अनेक बीमारियों जैसे – मोटापा, मधुमेह, कैंसर आदि से बचाव हेतु दालों के उपयोग की सलाह देते हैं। विश्व भर में दालों के उत्पादन एवं उपभोग के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ाने हेतु संयुक्त राष्ट्र संगठन ने वर्ष 2016 को अंतर्राष्ट्रीय दलहन वर्ष घोषित किया है।

राजमा भी सबकी पसंद होता है। शायद आप भी राजमा–चावल के शौक़ीन होंगे। राजमा में उच्च मात्रा में आयरन मौजूद होता है, जिस वजह से ये ताकत देने का काम करता है। साथ ही ये शरीर में ऑक्सीजन के संचार को बढ़ाता है। राजमा में मौजूद फोलेट की मात्रा दिमाग के काम करने की क्षमता को बढ़ाने के साथ ही उसे दुरुस्त भी रखती है। मैग्नीशियम की मात्रा माइग्रेन जैसी गंभीर समस्या में राहत दिलाती है। हफ्ते में एक बार इसका सेवन बहुत ही फायदेमंद होता है। इसके साथ राजमा में मौजूद विटामिन के की मात्रा कोशिकाओं को बाहरी नुकसान से बचाती है जो कैंसर का मुख्य कारण होते हैं। विटामिन के की पर्याप्त मात्रा दिमाग के साथ ही तंत्रिका–तंत्र के लिए भी बहुत ही फायदेमंद होती है। राजमा में उच्च मात्रा में फाइबर होते हैं, जो पाचन क्रिया को सही बनाए रखते हैं। साथ ही, ये रक्त शर्करा के स्तर को भी नियंत्रित रखने में मददगार होता है। राजमा में मौजूद मॉलिबडेनम का काम शरीर की विषाक्तता को बाहर करना है।

स्वास्थ्य को बेहतर बनाते तिलहन

तिलहन यानी वे फसलें जिनसे वनस्पति तेल का उत्पादन होता है। तिलहन के उत्पादन में भारत का स्थान विश्व में तीसरा है। तिलहन में दो प्रकार के बीज आते हैं। एक वे जिनका दाना छोटा होता है, जैसे– अलसी, सरसो और तिल आदि और दूसरे वे जिनका दाना बड़ा होता है जैसे मूंगफली, सोयाबीन, और सूरजमुखी आदि। आइए जानते हैं किस प्रकार तिलहन हमारे स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में योगदान देते हैं।

तिलहनी फसलों में तिल का प्रमुख स्थान है। तिल को विश्व का सबसे पहला तिलहन माना जाता है और इसकी खेती पांच हज़ार वर्ष पहले शुरू हुई थी। तिल के लड्डू और चिक्की सबकी पसंद होते हैं। तिल या तिल्ली अपने खास गुणों के कारण कई प्रकार से फायदेमंद है। भारत में तिल दो प्रकार का होता है– सफेद और काला। 'तिल' शब्द का प्रयोग प्राचीन संस्कृत में मिलता है, यहां तक कि जब तेल का कोई अन्य स्रोत ज्ञात नहीं था, तब तिल से ही तेल निकाला जाता था। अथर्ववेद में भी तिल और धान द्वारा तर्पण का उल्लेख है। आयुर्वेद के अनुसार तिल का प्रयोग मानसिक दुर्बलता को कम करता है और हमें तनाव से मुक्त रखता है। प्रतिदिन थोड़ी मात्रा में तिल का सेवन कर आप मानसिक समस्याओं से निजात पा सकते हैं। तिल के तेल का प्रयोग या फिर प्रतिदिन थोड़ी मात्रा में तिल को खाने से बालों का असमय पकना और झड़ना बंद हो जाता है। तिल को कूटकर खाने से कब्ज की समस्या नहीं होती। साथ ही काले तिल को चबाकर खाने के बाद ठंडा पानी पीने से बवासीर में लाभ होता है। इससे पुराना बवासीर भी ठीक हो जाता है।

सोयाबीन को गोल्डन बीन भी कहा जाता है क्योंकि इसमें जितने आवश्यक अमीनो अम्ल पाए जाते हैं, उतने किसी अन्य पादप उत्पाद में नहीं मिलते हैं। सोयाबीन के अलावा ये अमीनो अम्ल सिर्फ मांस में ही पाया जाता है। इसी कारण सोयाबीन को 'शाकाहारियों का मांसाहार' भी कहा जाता है। वैसे तो सोयाबीन फलीदार पौधा होता है जो दलहन से मेल खाता है पर इसके तेलीय गुणों के कारण इसे तिलहन में रखा जाता है। आहार विशेषज्ञों के अनुसार प्रतिदिन पचास ग्राम सोयाबीन के सेवन से शरीर में कोलेस्ट्रॉल का स्तर 3 प्रतिशत तक कम हो जाता है। हाल में हुए शोधों में इस बात के स्पष्ट प्रमाण मिले हैं कि सोयाबीन में पाया जाने वाला प्रोटीन शरीर में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को उसी प्रकार कम करता है, जिस प्रकार कोलेस्ट्रॉल कम करने वाली औषधियां करती हैं। सोयाबीन में लगभग 20 प्रतिशत तेल एवं 40 प्रतिशत उच्चा गुणवत्ता युक्त प्रोटीन होता है। सोयाबीन में उपलब्ध प्रोटीन बहुमूल्य अमीनो एसिड लायसिन से भरपूर

होता है। अधिकांश अनाजों में इसकी कमी होती है। इसके अतिरिक्त इसमें खनिजों, लवण एवं विटामिनों की अच्छी मात्रा पाई जाती है। इसके अंकुरित दाने में विटामिन सी की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है।

सरसो तिलहन की मुख्य फसल है जिसके बीज से तेल निकाला जाता है। सरसो के तेल का उपयोग भोजन बनाने और शरीर की मालिश के लिए सदियों से होता आ रहा है। आयुर्वेद के अनुसार कड़वा तेल यानी सरसो के तेल में कई गुण हैं जो हमारी सेहत और बढ़ती उम्र में बेहद फायदा पहुंचाते हैं। सरसो का तेल दर्दनाशक होता है जो गठिया व कान के दर्द से राहत देता है और सभी चर्म रोगों से रक्षा करता है। सरसो का तेल निकाले जाने के बाद प्राप्त खली मवेशियों को खिलाने के काम आती है। खली का उपयोग उर्वरक के रूप में भी होता है। इसका सूखा डंठल जलावन के काम में आता है। इसके हरे पत्ते से सब्जी भी बनाई जाती है। इसके बीजों का उपयोग मसाले के रूप में भी होता है। जर्मनी में सरसो के तेल का उपयोग जैव–ईंधन के रूप में भी किया जाता है। सरसो के तेल में मौजूद विटामिन शरीर के मेटाबाल्जिम को बढ़ाते हैं जिससे वजन आसानी से कम होने लगता है। मच्छरों से पूरी दुनिया परेशान है। सरसो का तेल शरीर पर लगाकर सोने से मच्छरों के डंक से बचा जा सकता है। सरसो के तेल में कपूर मिलकर मालिश करने से गठिया दर्द में आराम पहुंचता है। दिल के रोगियों के लिए और कमर दर्द व अस्थमा में भी सरसो का तेल कारगर है। सरसो के तेल में कैंसर को रोकने वाला प्राकृतिक तत्व ग्लुकोसिनोलेट होता है। आयुर्वेद के अनुसार दांत के दर्द में सरसो का तेल बहुत ही फायदेमंद होता है। यदि दांतों में किसी प्रकार का दर्द हो रहा हो तो सरसो के तेल में नमक मिलाकर उंगली के सहारे दांत पर धीमे–धीमे रगड़ने से राहत मिलती है और दांत भी मजबूत होते हैं।

ठंडक की आहट हो चुकी है और मूंगफली के बाज़ार लगने वाले हैं। मूंगफली एक प्रमुख तिलहन फसल है जो वनस्पति प्रोटीन का एक सस्ता स्रोत है। मूंगफली में प्रोटीन की मात्रा मांस की तुलना में 1.3 गुना, अंडों से 2.5 गुना एवं फलों से 8 गुना अधिक होती है। मूंगफली पोषक तत्वों का खजाना है। 100 ग्राम कच्ची मूंगफली में एक लीटर दूध के बराबर प्रोटीन होता है। मूंगफली पाचन शक्ति बढ़ाने में भी कारगर है। 250 ग्राम भुनी मूंगफली में जितनी मात्रा में खनिज और विटामिन पाए जाते हैं, वो 250 ग्राम मांस से भी प्राप्त नहीं हो सकता है। मूंगफली के तेल में कोलेस्ट्रॉल स्तर घटाने, दिल को स्वस्थ रखने, कैंसर से लड़ने और पाचन प्रक्रिया को दुरुस्त बनाए रखने के गुण होते हैं। इसमें फैटी एसिड असंतुलित मात्रा में नहीं होता है तो शरीर में वसा भी नहीं बढ़ती है। मूंगफली के तेल से मालिश करने से जोड़ों के दर्द में आराम मिलता है क्योंकि यह विटामिन ई से भरपूर होता है। मूंगफली के तेल के सेवन से पेट की बीमारियां काफी हद तक दूर हो जाती हैं। कब्ज, पाचन क्रिया, डायरिया आदि रोगों से निजात मिल जाती है। मधुमेह के रोगियों को चिकित्सक मूंगफली के तेल के सेवन की सलाह देते हैं। इस तेल के सेवन से शरीर में इंसुलिन की पर्याप्त मात्रा बनी रहती है। इसके सेवन से रक्त–शर्करा स्तर सामान्य रखने में काफी मदद मिलती है।

तिलहन की फसल सूरजमुखी के फूलों से भरा खेत अपने सौंदर्य से सबको आकर्षित करता है। जिस दिशा में सूरज जाता है उसी दिशा में सूरजमुखी मुड़ता जाता है। सूरजमुखी के नामकरण का भी यही कारण है। सूरजमुखी के बीज से उत्कृष्ट गुणवत्ता का खाद्य तेल प्राप्त होता है और इसकी खली मुर्गी को खिलाई जाती है। सूरजमुखी तेल खाना पकाने के लिए, वाहक तेल के रूप में और बायो–डीज़ल के उत्पादन में इस्तेमाल किया जाता है। इनके बीजों में विटामिन सी होता है जोकि दिल की बीमारी को दूर रखने में मदद करता है। साथ ही इसमें मौजूद विटामिन ई कोलेस्ट्रॉल को खून की धमनियों में जमने से रोक कर हार्ट

अटैक और स्ट्रोक का खतरा टालता है। सूरजमुखी के तेल में मोनो और पोलीसैच्युरेटेड फैट्स होते हैं, जोकि वसा के अच्छे रूप माने जाते हैं। यह खराब कोलेस्ट्रॉल को घटाने का काम करते हैं। इसके उच्च फाइबर कोलेस्ट्रॉल को घटाते हैं। इसमें मैग्नीशियम की भी अधिक मात्रा होती है, जिससे हड्डियों में मजबूती आती है।

तिलहन फसल अलसी समशीतोष्ण प्रदेशों का पौधा है। अलसी में ओमेगा–3 वसा अम्ल पाया जाता है जो दिल के लिए फायदेमंद है। ओमेगा–3 जलन को कम करता है और हृदय गति को सामान्य रखने में मददगार होता है। ओमेगा–3 युक्त भोजन से धमनियां सख्त नहीं होती हैं। साथ ही यह श्वेत रक्त कणिकाओं को धमनियों की आंतरिक परत पर चिपका देता है। एक अध्ययन के अनुसार अलसी के सेवन से ब्रेस्ट कैंसर, प्रोस्टेट कैंसर और कोलोन कैंसर से बचाव होता है। अलसी के बीज और एक तिहाई भाग मुलैठी का चूर्ण मिलाकर गर्म पानी में काढ़ा बनाकर पीने से रक्तातिसार और मूत्र संबंधी रोगों में आराम पहुंचता है। एक अमेरिकी शोध नतीजों के अनुसार अलसी में मौजूद लिगनन से रक्त शर्करा–स्तर नियंत्रित रहता है। चिकित्सक अलसी के अधिक सेवन की सलाह नहीं देते हैं क्योंकि इसमें मौजूद लैक्सेटिव से दस्त, सीने में जलन और बदहजमी जैसी पेट की समस्याएं भी हो सकती हैं। इसके बीज से तेल निकाला जाता है और तेल का प्रयोग वार्निश, रंग, साबुन, रोगन, पेंट तैयार करने में किया जाता है।

तिलहन फसल अरंडी का बीज बहु–उपयोगी कैस्टर ऑयल (अरंडी का तेल) का स्रोत है. इसके बीज में 40–50 प्रतिशत तक तेल उपस्थित रहता है। यह एक प्रकार का ट्राई ग्लिसराइड्स होता है जिसमें 90 प्रतिशत वसा अम्ल होते हैं। यह मुख्य रूप से कृत्रिम चमड़े के विनिर्माण में उपयोग होता है। कुछ कृत्रिम रबर में यह एक आवश्यक घटक है। इसका सबसे बड़ा प्रयोग पारदर्शी साबुन के निर्माण में होता है। इसके अलावा इसके औषधीय प्रयोग भी होते हैं। अरंडी का तेल उत्कृष्ट विलायक के रूप में नेत्र शल्य चिकित्सा में प्रयुक्त होता है। यह अस्थायी कब्ज में उपयोग मे आता है और यह बच्चों और वृद्धों के लिए विशेष उपयोगी होता है। यह पेट के दर्द और तीव्र दस्त में प्रयोग किया जाता है। अरंडी का तेल बाह्य रूप मे, दाद, खुजली, आदि विभिन्न रोगों के लिए विशेष उपयोगी होता है। जोड़ों का दर्द, त्वचा रोग और कब्ज जैसी समस्याओं में भी इसका प्रयोग होता है। कैस्टर ऑयल बाल झड़ने की समस्या में कारगर होता है और मुंहासों को प्रभावी रूप से ठीक करने में मदद करता है।

हमारी जागरूकता हमें दालों और तेलों में मिलावट से सावधान कर सकती है। मेटैनिल पीत भारत में बड़े पैमाने पर इस्तेमाल एक प्रमुख गैर अनुमत खाद्य रंग है जिसका प्रयोग अवैध तरीके से दालों को रंगने में किया जाता है। इस मिलावट से शरीर के तंत्रिका ऊतकों को नुकसान होता है। एक आम उपभोक्ता इस मिलावट की जांच स्वयं करके सम्बंधित अधिकारी तक शिकायत पहुंचा सकता है। आमतौर पर उपलब्ध हाइड्रो क्लोरिक एसिड की कुछ बूंदों में रंगी हुई दाल डालने से अम्ल गुलाबी रंग का हो जाता है, तो यह मेटैनिल पीत रंग की उपस्थिति का संकेत करता है। बाजार में बड़े पैमाने पर अरहर की दाल में खेसारी दाल की मिलावट की जा रही है। खेसारी की दाल सेहत के लिए काफी नुकसानदायक है और इसके लगातार सेवन से कई गंभीर बीमारियां हो सकती हैं। इसी तरह सरसो के तेल में पॉम ऑयल की मिलावट होती है, जिसे फ्रिज में रखकर पहचाना जा सकता है। पॉम आयल फ्रिज में घी की तरह जमने लगता है।

(लेखक विज्ञान संचारक हैं एवं विज्ञान प्रसार, नोएडा में वैज्ञानिक हैं।)
ई–मेल : nimish2047@gmail.com

इस आलेख को नवीन शोध एवं आयुर्वेद के तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। यदि पाठक आलेख में वर्णित किसी दलहन या तिलहन सम्बन्धी जानकारी का प्रयोग किसी रोग के उपचार में करना चाहते हैं तो इससे पूर्व चिकित्सक की सलाह लेना आवश्यक है। आलेख में प्रकाशित सेहत से जुड़ी सामग्री के आधार पर कृपया कोई निर्णय लेने से पूर्व आहार विशेषज्ञ से परामर्श करें, तत्पश्चात अपने शरीर की आवश्यकता के अनुसार दलहन या तिलहन का प्रयोग करें।

स्वच्छता पखवाड़ा लेखा-जोखा

एक कदम स्वच्छता की ओर

पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने 01 अक्टूबर से 15 अक्टूबर, 2016 तक अपना दूसरा स्वच्छता पखवाड़ा मनाया, जिसमें ये दर्शाया गया कि सरकारी क्षेत्र देश को स्वच्छ बनाने और अपने कर्मचारियों के बीच स्वच्छता एवं साफ–सफाई को बढ़ावा देने के कार्य में अग्रणी भूमिका निभा रहा है।

पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने गांव स्वच्छता सूचकांक विकसित किया है जिसके द्वारा ग्राम पंचायतें विभिन्न स्वच्छता दायरों के आधार पर स्वयं–रेटिंग अभ्यास संचालित करती हैं। मंत्रालय ने सभी राज्यों को इन गतिविधियों को तेज़ी से संचालित करने के बारे में अनुदेश जारी किए हैं। इसके अलावा आईएमआईएस को सूचनाएं एकत्र करने और सिटीजन रेटिंग के लिए मोबाइल एप्लीकेशन उपलब्ध करवाया गया है। ग्राम स्वच्छता सूचकांक का विकास बड़े पैमाने पर किए गए अध्ययन के आधार पर किया गया था जिसके दौरान करीब 70,000 घरों का उनकी स्वच्छता के प्रति अवधारणा को समझने के वास्ते सर्वेक्षण किया गया था। गांवों की स्वच्छता अपने यहां सुरक्षित शौचालयों की उपलब्धता और उनके इस्तेमाल करने की प्रतिशतता, घरों के आसपास और सार्वजनिक स्थलों पर शौच करने और घरों के आसपास पड़े गंदे पानी की निकासी के आधार पर निर्धारित होगी।

इसके अतिरिक्त मंत्रालय ने ग्रामसभा की बैठकें आयोजित करने और ग्राम स्वच्छता सूचकांक पर पहुंचने में उनकी मदद के लिए डॉटा एकत्र करने के लिए दिशानिर्देश, पेम्पलेट्स और फार्म प्रेषित किए। नागरिकों को भारत के किसी भी गांव में स्वच्छता की स्थिति देखने और स्वच्छता की रेटिंग करने के वास्ते स्वच्छता एप्स डाउनलोड करने के लिए भी प्रोत्साहित किया गया। इस दौरान कविता एवं पोस्टर प्रतियोगिता और 14 अक्टूबर को कार्यालय के सबसे स्वच्छ अनुभाग चयन के लिए प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया।

इस बार पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने स्वच्छता पखवाड़ा **ग्रामीण विकास और पंचायती राज मंत्रालय** के साथ मिलकर कार्यान्वित किया। यद्यपि पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने वर्ष के दौरान अभियान के लिए आयोजक और समन्वयक की भूमिका निभाई। इस पर यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी थी कि पखवाड़े की गतिविधियां अभिनव, दूरगामी और स्थायी प्रकृति की हो। उसका कहना था कि स्वच्छता पखवाड़े की सफलता शासन के प्रत्येक स्तर पर सभी लोगों की भागीदारी पर निर्भर करेगी ताकि सभी लोगों को सरकार सक्रिय भूमिका में दिखाई दे और वे इसके प्रति प्रोत्साहित हो सकें।

इस पखवाड़े के दौरान पंचायती राज मंत्रालय ने पूर्ण स्वच्छता हासिल करने के लिए पंचायती राज संस्थानों के निर्वाचित प्रतिनिधियों और अधिकारियों के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रमों का आयोजन किया। दूसरी तरफ, ग्रामीण विकास मंत्रालय ने मनरेगा कार्यक्रम के अधीन तमिलनाडु मॉडल की प्रतिकृति में ठोस और तरल कचरा प्रबंधन को लागू करने के लिए 8 राज्यों में 50 गांवों को गोद लिया।

एएसआई संरक्षित सभी ऐतिहासिक स्मारक पॉलिथीन मुक्त क्षेत्र घोषित

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) द्वारा संरक्षित सभी ऐतिहासिक स्मारकों और पुरातात्विक जगहों को पॉलिथीन मुक्त क्षेत्र घोषित किया गया है। सभी राज्य सरकारों/केंद्रशासित सरकारों को सलाह जारी की गई है कि ऐसे ऐतिहासिक स्मारकों की सीमा के 300 मीटर के दायरे को एएसआई पॉलिथीन मुक्त क्षेत्र घोषित कर चुकी है। स्वच्छ भारत पखवाड़ा 16 से 30 सितंबर 2016 के दौरान लिए गए इन फैसलों की जानकारी केंद्रीय संस्कृति और पर्यटन राज्य मंत्री डॉ. महेश शर्मा ने दी। डॉ. महेश शर्मा स्वच्छ भारत अभियान पर केंद्रीय ग्रामीण विकास और पेयजल स्वच्छता मंत्री श्री नरेंद्र सिंह तोमर के साथ हाल ही में आयोजित एक संयुक्त प्रेस वार्ता को संबोधित कर रहे थे। उन्होंने कहा कि **केंद्रीय संस्कृति मंत्रालय** ने बाउंड्री बनाने, शौचालय बनाने और सभी एएसआई संरक्षित स्मारकों में दिव्यांगों के आने–जाने के लिए खास सुविधा दी है। केंद्रीय मंत्री ने कहा कि एएसआई ने टॉप रैंक के 25 आदर्श स्मारकों को उनकी सफाई के आधार पर जैसे वहां मौजूद शौचालय, हरे–भरे मैदान, पॉलिथीन मुक्त क्षेत्र, जागरूकता बोर्ड, दिव्यांगों के लिए सुविधाएं, पेयजल और कूड़ादान की सुविधाओं को देखते हुए चुना गया है। 'रानी की वाव (गुजरात)' को देश के सबसे साफ– सुथरे दर्शनीय स्थल के रूप में चिन्हित किया गया है।

स्वच्छ भारत मिशन की दूसरी वर्षगांठ के समारोह देशभर में मनाए गए और इस अवसर पर खुले में शौच मुक्ति की घोषणाएं और कस्बों तथा गांवों सहित देश के कई हिस्सों में लोगों को लामबंद करने के लिए बड़े पैमाने पर गतिविधियां संचालित की गईं।

महात्मा गांधी की 147वीं जयंती पर और स्वच्छ भारत मिशन की दूसरी वर्षगांठ के अवसर पर पोरबंदर को खुले में शौचमुक्त घोषित किया गया। देश में अब तक एक लाख गांव और 37 जिले खुले में शौच की प्रथा से मुक्त हो चुके हैं।

स्वच्छ और आदर्श गांव हिवरे बाजार

—शुभम वर्मा

यह कहानी है महाराष्ट्र के अहमदनगर में बसे हिवरे बाजार गांव की – यहां 1988 तक हालात इतने बुरे हो चुके थे कि कोई यहां रहना नहीं चाहता था। पानी ना होने के कारण खेती भी बर्बाद हो गई थी। उसी समय वहां के एक पढ़े–लिखे युवा पोपट राव, जिनकी रूचि क्रिकेट खेलने में थी तथा जो राष्ट्रीय–स्तर तक कई क्रिकेट टूर्नामेंट खेल चुके थे, अपने दोस्तों के साथ गांव के हालात पर चर्चा की। सभी युवाओं का मानना था कि गांव के लिए कुछ करना चाहिए, पर सवाल वही कि "बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा"। बातों–बातों में ही सभी ने तय कर लिया कि पोपट राव पढ़े–लिखे हैं, इन्ही को सरपंच बनाया जाए और सारे गांव ने मिलकर पोपट राव को अपना सरपंच चुन लिया। अब पोपट राव जो क्रिकेट में रूचि रखते थे तथा पुणे से पढ़े थे, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या किया जाए ?

एक तरफ अपना पुराना पूरा कैरियर तथा दूसरी तरफ गांव के लोगों का भरोसा और गांव के लोगों का भरोसा, कैरियर पर भारी पढ़ा तथा पोपट राव ने गांव को बदलने का मन बना लिया। पोपट राव ने देखा कि गांव में गंदगी, अशिक्षा, बेरोजगारी, पानी की कमी, शराब आदि समस्याएं हैं। इन्हें बदलने के लिए यदि वो अकेले कार्य करेंगे तो लोग बात नहीं सुनेंगे। अतः उन्होंने महात्मा गांधी का ग्राम स्वराज्य का रास्ता अपनाया तथा गांव के सभी लोगों को बैठाकर ग्रामसभा बुलाई एवं गांव के सारे अधिकार ग्रामसभा को सौंप दिए गई। अब यदि कोई भी शिक्षक या ग्राम सेवक गांव में देर से आता या छुट्टी मारता तो ग्रामसभा फैसला लेकर उसकी तनख्वाह कटवा देती। अतः सभी सरकारी कर्मचारी ठीक समय पर काम करने लगे। गांव के लिए आ रहे पूरे फंड का ब्यौरा गांव की ग्राम पंचायत की दीवार पर लिखा जाने लगा जिसमें रोज कितना खर्चा हुआ और कहां गया, यह सब लिखा जाने लगा। इससे गांव वालों के मन में गांव के प्रति अपनेपन की भावना का विकास हुआ तथा लोगों ने भी जनभागीदारी से गांव के कामों में सहयोग देना शुरू कर दिया। अब समस्याएं थी गंदगी, शराब, खेती, बेरोजगारी आदि की।

चूंकि बूढ़े लोगों की आदतों को बदलना बहुत मुश्किल था अतः शुरुआत स्कूल के बच्चों के साथ की गई। **सबसे पहले जिस मुद्दे को चुना गया वह था ग्रामीण स्वच्छता।** इस समय सारा गांव खुले में शौच करने जाता था जिससे सारे गांव में गंदगी होती थी तब स्कूल में शौचालय बना के बच्चों को बंद कमरे में शौच करने की प्रेरणा दी गई। जिन बच्चों को डर लगता था उनके लिए दरवाजे को आधा काट कर, नए तरह के दरवाजे विकसित किए गए जिनमे नीचे से बंद एवं ऊपर जाली लगी होती थी, जिससे छोटे बच्चों को अंधेरे कमरे में बैठने से डर नहीं लगता था। यह आदत बच्चों में पड़ने के बाद गांव को भी इस विषय पर जाग्रत किया गया तथा इसमें बच्चों के निगरानी दल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह दल सभी को खुले में शौच करने पर रोकता था तथा समझाता था। धीरे–धीरे करके सारा गांव खुले में शौच से मुक्त हो

बच्चों के लिए जाली वाला शौचालय

गांव को मिले पुरस्कार

गया। पंचायत ने सरकार और लोगों की मदद से सभी घरों के शौचालय बनाने का सामान इकठ्ठा मंगा लिया एवं उससे सभी के घरों के शौचालय बनाने का काम शुरू हो गया तथा उसकी निगरानी का काम भी सारा गांव करता था। अतः कोई ठेकेदार पैसे खाना और मिलावट करने जैसे काम नहीं कर पाता था। वरना ग्रामसभा में उसे सजा भुगतनी पड़ती थी।

पोपट राव जी बताते हैं "गांव में सारे शौचालय बनने के बाद भी एक बार गांव के एक बुजुर्ग खुले में शौच के लिए चले गए। उनको शौच जाते देख उनका पोता उनके पीछे गया तथा उनके शौच करने के बाद उन्हीं के सामने उस बच्चे ने उनके मल को स्वयं अपने हाथों से उठाकर पन्नी में भरा तथा मिट्टी डालकर उसे कूड़ेदान में फेक कर आ गया।" उसके इस काम को देखकर दादा को इतनी शर्मिंदगी महसूस हुई कि उन्होंने फिर कभी खुले में शौच नहीं किया। **इसी तरह के कई उदाहरण बच्चों ने पेश किए जिससे ग्रामसभा में फैसला ले लिया गया कि कोई खुले में शौच नहीं जाएगा तथा पूरे गांव में कूड़ेदान लगा दिए गए एवं कहीं भी कचरा फेंकने पर जुर्माना लगा दिया गया। यही नहीं बाद में गांव में प्लास्टिक पर भी पाबंदी लगा दी गई। देखते ही देखते गांव गंदगी से मुक्त हो गया।**

इसी तरह ग्राम पंचायत ने निर्णय लिया कि शराब की दुकान भी गांव में नहीं रहेगी। इस पर गांव में बहुत चर्चा हुई तथा अधिकतर लोगों, महिलाओं और बच्चों ने शराबबंदी के पक्ष में वोट किया और सभी लोगों को ग्राम पंचायत का निर्णय मानना पड़ा जिससे शराबबंदी और उसके कारण हो रही सट्टेबाजी भी गांव से खत्म हो गई। इसके बाद खेती की समस्या को दूर करने के लिए गांव में जलसंचय का कार्य व्यापक–स्तर पर किया गया। जिस गांव में लोग पानी के लिए तरसते थे वहां सभी गांव वालों ने मिलकर कई छोटे–छोटे तालाब खोद दिए एवं पहाड़ पर भी पानी रोकने के लिए गड्ढे किए गए, जिससे जल का स्तर गांव में बढ़ता चला गया। इसके अलावा गांव के बच्चों ने गांव के आसपास कई फलों के बीज बोये तथा उपयोगी पेड़–पौधों का रोपण किया। इसके परिणामस्वरूप, गांव का जलस्तर काफी बढ़ गया तथा खेती में किसानों को फायदा होने लगा। अब इस गांव में गौ–पालन तथा दूध के उद्योग भी पनपने लगे तथा बेरोजगारी की समस्या भी हल हो गई। आज इस गांव में कोई भी व्यक्ति बेरोजगार नहीं है, ना ही यहां गंदगी है बल्कि यहां प्रति व्यक्ति साल में लाख रुपये तक कमाता है और सांप्रदायिक सद्भावना इतनी है कि हिन्दुओं ने एकमात्र मुस्लिम परिवार के लिए एक मस्जिद बनाकर दी है। अब यहां पहले की तरह कोई लड़ाई–झगडे भी नहीं होते। यह गांव

जलसंचय

अपने सारे निर्णय ग्रामसभा करके लेता है तथा इसे आदर्श ग्राम के कई पुरस्कार भारत सरकार से तथा दुनिया भर से मिले हैं।

हिवरे बाजार के अन्य रोचक निर्णय जो ग्रामसभा ने लिए हैं इस प्रकार हैं –

- गांव की लड़की से जो भी बाहर वाला शादी करेगा, उसका एच.आई.वी. टेस्ट होता है।
- गांव की जमीन कोई बाहर वाला बिना ग्रामसभा की इजाजत के नहीं खरीद सकता।
- गांव में सभी सरकारी कर्मचारियों, शिक्षकों आदि को ग्रामसभा को रिपोर्ट करना होता है।
- गांव में कोई शराब की दुकान नहीं खुल सकती।
- छप्पर मुक्त अभियान से गांव के हर घर में पक्की छत वाले मकान बना दिए गए।
- फुकनी मुक्त अभियान के तहत बायोगैस तथा एलपीजी का प्रयोग गांव में शुरू कर दिया गया।
- टंटामुक्त योजना के तहत गांव ने आपसी झगड़े भी ग्रामसभा में सुलझाने शुरू कर दिए हैं जिससे पूरे गांव की कोई समस्या कोर्ट में नहीं जाती, सब गांव वाले मिलकर सुलझा लेते हैं।

अब गांव वाले औषधिक पौधे लगाने का कार्य तेजी से कर रहे हैं। इनका लक्ष्य है 2025 तक गांव में एक भी मरीज नहीं होना चाहिए। अब तक गांव में करीब 3000 औषधिक पौधे रोपे जा चुके हैं।

सचमुच, यह गांव एक जनभागीदारी के द्वारा काम करने का एक अदभुत नमूना है तथा गांधी जी के ग्राम स्वराज्य के सपने को साकार करने वाला एक अद्भुत उदाहरण है। इस गांव के उदाहरण से देशभर के गांव बहुत कुछ सीख सकते हैं।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेल : theshubhamhindi@gmail-com

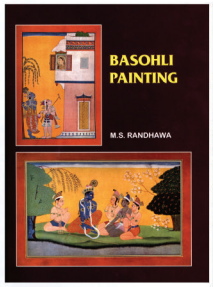

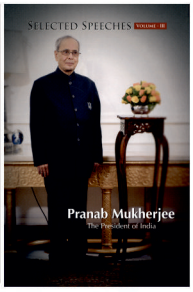

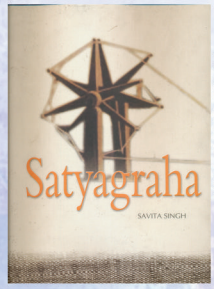

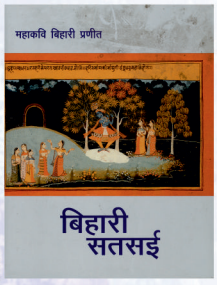

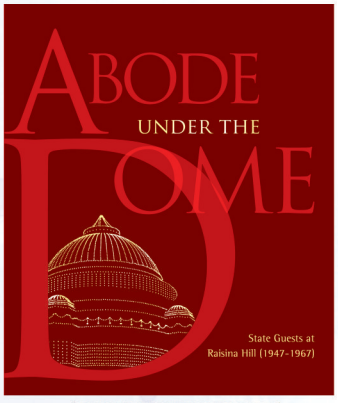

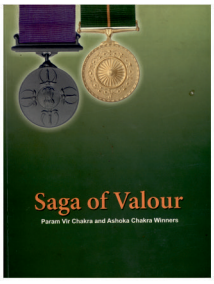

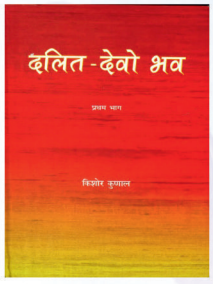

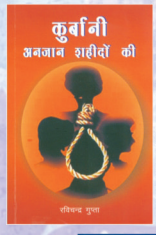

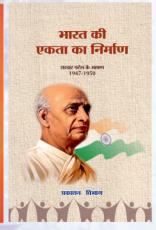

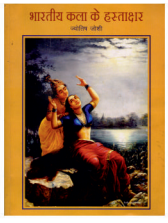

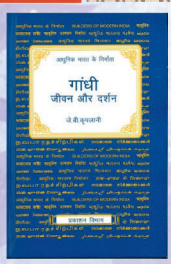

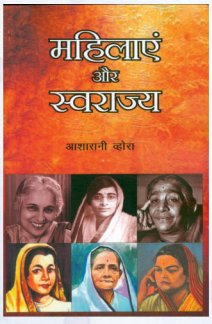

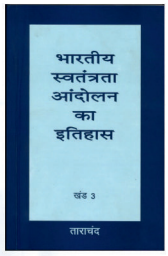

चुनी हुई पुस्तकें अब ऑनलाइन बिक्री के लिए उपलब्ध

स्वतंत्रता संग्राम, आधुनिक भारत के निर्माता, इतिहास, कला-संस्कृति, राष्ट्रपति भवन श्रृंखला और अन्य विभिन्न श्रेणियों की पुस्तकों के लिए कृपया

भारतकोष पोर्टल

https://bharatkosh.gov.in/Product

अथवा

publicationsdivision.nic.in

पर जाएं।

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

अपनी प्रतियां सुरक्षित कराने एवं व्यापार संबंधी पूछताछ के लिए कृपया संपर्क करें: 011-24369549,24362927

ई- मेल:dpdonlinebooks@gmail.com

@DPD_India

@publicationsdivision

आर. एन. आई./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2015–17
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–54/2015–17
1 नवंबर 2016 को प्रकाशित एवं 5–6 नवंबर 2016 को डाक द्वारा जारी

R.N.I./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2015-17
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2015-17
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : डॉ. साधना राउत, अपर महानिदेशक एवं प्रभारी, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II, नई दिल्ली–110020, संपादक : ललिता खुराना